Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-लोक

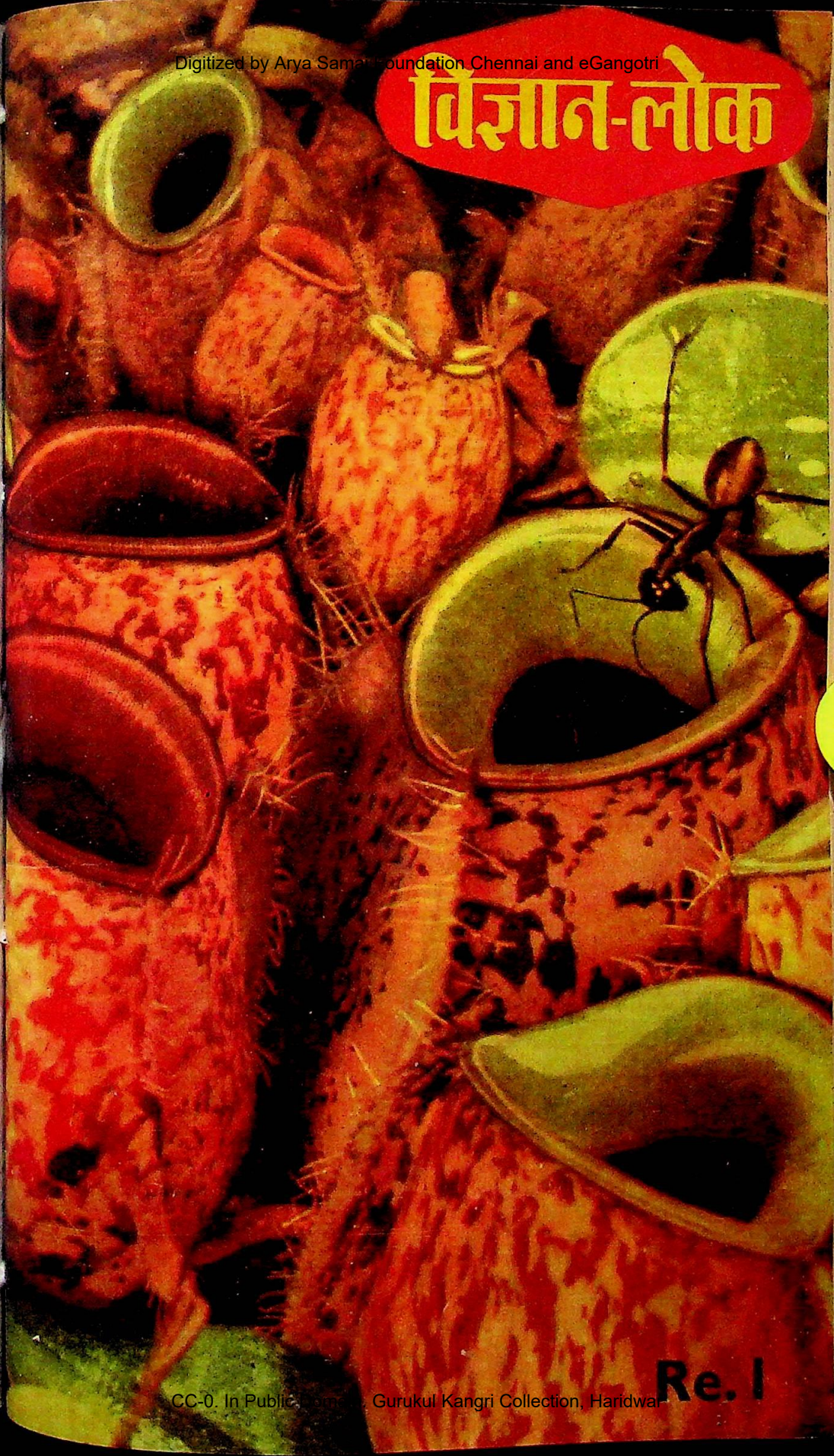

Re. 1

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

फूलों की सैर ३
—रतनकुमार टण्डन

होवरक्राफ्ट १०
—प्रसेनजितकुमार गांगुली

बाल-अंगघात १३
—शशिभूषण पाठक

ये टूटते तारे २०
—अविनाशचन्द्र शर्मा

थामस एल्वा एडीसन २४
—सत्यकुमार

ब्रह्माण्ड किरण ३१
—विमलेन्दु

जड़ जो बन गयी चीनी ३७
—देवेन मेवाड़ी

बृहस्पति की चट्टानी गुठली :
एक अन्तर्मुखी नगर ४३
—सूर्यदेव पाण्डेय

नेत्रदान की नवोपलब्धियां ४८
—मनोहर जोशी

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां ४२

अपनी बात

'युद्ध–१९७१'···भारत-पाक सम्बन्धों के सन्दर्भ में तथा 'बांगला देश' के अभ्युदय की दृष्टि से यह अद्वितीय तो कहा जायेगा ही, साथ ही यह देश की आत्मनिर्भरता की दृष्टि से भी 'मील का पत्थर' माना जायेगा।

हमारे वैज्ञानिकों के अथक प्रयत्नों से आज हमारा देश पूर्ण आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर है। कृषि, उद्योग, भारी मशीनरी, प्रतिरक्षा सामग्री—हर क्षेत्र में हमने पिछली दो दशाब्दियों में उल्लेखनीय प्रगति की है। विकासशील देशों की पंक्ति में हम अग्रणी हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि 'पश्चिम' पर हमारी निर्भरता कम होती जा रही है। जहां हमारे वैज्ञानिक शान्तिकाल में देश के साधनों का समुचित उपयोग करने की दिशा में प्रयत्नशील हैं, वहां वे देश की सुरक्षा हेतु चुनौतियों का सामना करने के लिए युद्ध सम्बन्धी अनुसन्धानों में भी लगे हुए हैं।

हमारे देश के वैज्ञानिकों को दोहरा उत्तरदायित्व निभाना है—बन्दूक भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितना खाद्यान्न···और यह सन्तोषप्रद है कि भारतीय वैज्ञानिक अपने लक्ष्य को भूले नहीं हैं।

वर्ष १२

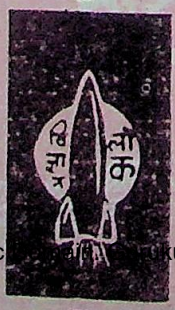

अंक १२

एक प्रति Re. 1·00
वार्षिक Rs. 12·00

सम्पादक : शंकर मेहरा
प्रकाशक : मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा-३

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फूलों की सैर

फूलों में रंग है तो गन्ध कम... गन्ध है तो रंग कम...

अद्भुत है प्रकृति की वैज्ञानिकता

रतनकुमार टण्डन, एम. एस-सी.

पौधे अपने रंग-बिरंगे फूलों की मादक सुगन्धों व मोहक रंगों द्वारा फुलवारियों और वन-वाटिकाओं की शोभा बढ़ाते हैं। क्या यह सब कुछ केवल लुभाने के लिए है? कदापि नहीं। प्रत्येक पौधे का अपना विशेष अभिप्राय इसके पीछे छिपा रहता है और वह है प्रजनन, परागण द्वारा वंश-वृद्धि। मादक सुगन्धों और मोहक रंगों द्वारा ही ये अपने साथी कीटों, भंवरों, मधुमक्खियों, तितलियों और पक्षियों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं ताकि परागण हो सके और मनुष्यों की भांति ये भी अपनी वंश-वृद्धि कर सकें। यह दूसरी बात है कि मनुष्य भी इनकी रंगारंग छटाओं का आनन्द लेता रहता है, परन्तु फूलों को तो सृष्टि ने विशेष ही प्रयोजन से सुगन्ध और चटकीले रंग प्रदान किये हैं। फूल वाले पौधों में मुख्यतः दो प्रकार से प्रजनन होता है। एक विधि में जनन पादप के किसी एक अंग (तना, पत्ती अथवा जड़) से होता है। इस क्रिया को कायिक प्रवर्धन कहते हैं। दूसरी विधि में नर और मादा युग्मक संयोजित होकर एक युग्मनज बनाते हैं जो विभाजन द्वारा नये पौधों को जन्म देता है। नर तथा मादा युग्मकों के संयोजन की क्रिया ही निषेचन कहलाती है।

बीजवाले पौधों में परागण अनिवार्य है

फूल वाले पौधों में नर अंग को पुंकेसर तथा मादा अंग को स्त्रीकेसर कहते हैं। पुंकेसर का मुख्य भाग परागकोश एक पतले पुंतंतु द्वारा पुष्पासन से जुड़ा होता है। परागकण नर युग्मक को स्त्रीकेसर तक ले जाते हैं। ये परागकोश में ही बनते हैं। स्त्रीकेसर का निचला भाग फूला हुआ होता है जो अण्डाशय कहलाता है। इसके भीतर एक या एक से अधिक बीजाण्ड पाये जाते हैं। मादा युग्मक का निर्माण बीजाण्ड के अन्दर होता है। अण्डाशय से मिली हुई ऊपर की ओर एक पतली वर्तिका होती है जिसके शिखर को वर्तिकाग्र कहते हैं। परागकणों के परागकोश से वर्तिकाग्र तक पहुंचने की क्रिया को परागण कहते हैं। सभी बीज वाले पौधों में बीज बनाने के लिए परागण की क्रिया अनिवार्य है।

परागण मुख्यतः दो प्रकार से होता है—स्वपरागण और पर-परागण। स्वपरागण केवल द्विलिंगी पुष्पों में ही हो सकता है। बहुधा इसके लिए किसी बाहरी साधन की आवश्यकता नहीं होती। स्वपरागण से प्राप्त बीज प्रायः दुर्बल होते हैं।

किसी-किसी द्विलिंगी पुष्प वाले पौधे में पुष्प के खिले बिना ही बीज बन जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

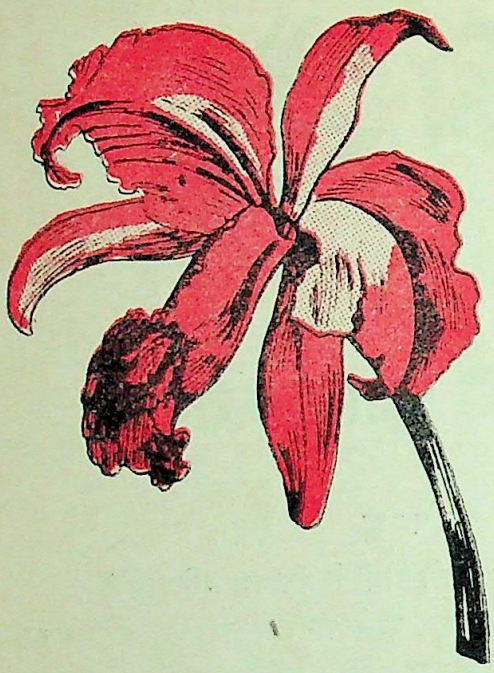

क्या फलों का आकर्षण सिर्फ लुभाने के लिए है ? क्या फलों की मादक गन्ध सिर्फ मोहित करने के लिए है ? आखिर फलों के अस्तिव का अर्थ क्या है ?

कनकोआ (कामलिना बंगालेंसिस) के पुष्पों में यह क्रिया दिखायी देती है। पुंकेसर और स्त्रीकेसर एक-दूसरे के बहुत समीप पुष्पपर्णों के अन्दर बन्द रहते हैं और परागकोश के फटते ही परागकण उस पुष्प के वर्तिकाग्र पर जा गिरते हैं।

अभिशप्त पिटूनिया

प्रकृति स्वपरागण न होने देने के लिए भांति-भांति के उपाय करती है ताकि पर-परागण को बढ़ावा मिले और सशक्त बीज उत्पन्न हों। उदाहरणार्थ, कुछ पुष्पों में नर और मादा अंग अलग-अलग समय पर परिपक्व होते हैं। दूसरी ओर पुष्प की संरचना भी कभी-कभी स्वपरागण के लिए बाधक बन जाती है। कहीं-कहीं परागकण वर्तिकाग्र तक पहुंचकर भी अपने चरम लक्ष्य में सफल नहीं हो पाता। रंग-बिरंगे पुष्पों वाला पिटूनिया इसी शाप से अभिशप्त है।

प्रकृति स्वपरागण न होने देने के लिए भांति-भांति के उपाय करती है ताकि पर-परागण को बढ़ावा मिले और सशक्त बीज उत्पन्न हों, इसीलिए कुछ पुष्पों में नर और मादा अंग अलग-अलग समय पर परिपक्व होते हैं

एकलिंगी पुष्पों में पर-परागण के सिवाय निषेचन का अन्य कोई दूसरा साधन नहीं है। पर-परागण के लिए भंवरे, मधु-मक्खी, वायु, जल, कीट, पतंगे, पक्षी एवं अन्य जन्तु सहायक होते हैं।

जिन पौधों में वायु या जल द्वारा पर-परागण होता है, वहां प्रकृति ने पुष्पों को नतो भड़कीले रंग ही प्रदान किये हैं न कोई विशेष सुगन्ध ही दी है। लेकिन इनके परागकण बहुत अधिक संख्या में बनते हैं, क्योंकि ऐसा न हो तो हो सकता है, निषेचन न हो। वनस्पतिशास्त्र द्वारा यह पता चला है किमरक्यू-रेलिस एनुआ के प्रत्येक पुष्प १, ३५, २०, ००, ००० पराग-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कण बनाते हैं। यह कितनी आश्चर्यजनक बात है! परन्तु इन अनगिनत परागकणों का महत्त्व यह है कि पौधा यह चाहता है कि चाहे जितनी भी संख्या इनकी हवा में इधर-उधर उड़े और नष्ट हो, फिर भी ये परागकण कहीं न कहीं अपना लक्ष्य पूरा कर लें, इसी में प्रकृति की जीत है।

पानी में उगने वाले प्रत्येक पुष्प का परागण जल द्वारा ही हो, यह जरूरी नहीं। कमल का पुष्प जलज अवश्य है, परन्तु इसके पुष्प का परागण कीटों द्वारा होता है और यह जल की सतह के ऊपर खिलता है।

जल-परागण

समुद्र के अन्दर जोस्टेरा मैरीना पानी में पलता है। इसके परागकण धागे की तरह पतले और २५० माइक्रोन तक लम्बे होते हैं। इनका आपेक्षिक घनत्व समुद्री जल के आपेक्षिक घनत्व के बराबर होने के कारण ये समुद्र की किसी भी गहराई पर सफलतापूर्वक तैरते रहते हैं। इस पौधे के वर्तिकाग्र भी बहुत लम्बे होते हैं। परागकण के सम्पर्क में आते ही वर्तिकाग्र उसके चारों ओर लिपट जाता है मानो आलिंगन की क्रिया हो रही हो। इस प्रकार परागण सम्पन्न होता है।

फल जल के भीतर पकता है

वेलिसनेरिया स्पाइरैलिस जल-परागण का एक अनोखा उदाहरण प्रस्तुत करता है। इस पौधे के पुष्प एकलिंगी होते हैं। ये पौधे पानी के नीचे ही पलते हैं। पकने पर नर पुष्प टूटकर पानी की सतह पर तैरने लगते हैं। मादा पुष्प का वृतक लम्बा होता है। इस कारण पौधे पर लगे-लगे ही पुष्प पानी की सतह तक पहुंच जाते हैं व इसके चारों ओर एक गड्ढा-सा बन जाता है। जब कोई नर पुष्प बहता हुआ इसके निकट आ जाता है तो इस गड्ढे में लुढ़क जाता है और परागकण उस पर बिखर जाते हैं। तत्पश्चात तुरन्त ही पुष्प का

एकलिंगी पुष्पों में पर परागण के अतिरिक्त निषेचन का दूसरा कोई साधन नहीं है

जिन पौधों में वायु या जल द्वारा परागण होता है उनके पुष्पों को प्रकृति ने न तो भड़कीले रंग ही प्रदान किये हैं, न कोई विशेष सुगन्ध दी है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डण्ठल कुण्डलित होकर परागित पुष्पों को पानी की सतह से अन्दर खींच लाता है। अंततः इसका फल जल के भीतर ही पकता है।

पर-परागण के सबसे महत्त्वपूर्ण साधन हैं कीट और इनमें भी मुख्य है मधुमक्खी। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि ८० प्रतिशत परागण मधुमक्खियों द्वारा होता है। इन्हीं को आकर्षित करने के लिए पौधों के पुष्पों में भड़कीले रंग और दूर-दूर तक फैलने वाली सुगन्ध होती है। सैलविया का पुष्प इसका एक उत्तम और सर्वपरिचित उदाहरण है।

केरियनथस के पुष्प में अनोखी रचना

सबसे अनोखी रचना जो संभवतः कीट परागण के हित में है वह है केरियनथस के पुष्प में। इसमें एक लम्बा स्तम्भ होता है जिसका अगला भाग ९०° पर मुड़ा होता है।

फूलों की दुनिया निराली है···

इस मुड़े भाग पर ही पुंकेसर तथा स्त्रीकेसर दोनों लगे होते हैं। स्तम्भ के आधार से एक वृन्त निकलता है जिसका अग्र भाग एक प्याली के आकार का होता है। वृन्त के पास ही स्तम्भ पर दो ग्रंथियां लगी होती हैं। इन ग्रंथियों की स्थिति ऐसी होती है कि उनसे निकले द्रव की प्रत्येक बूंद प्याली में ही गिरती है। पुष्प खुलने के समय प्याली खाली होती है। परन्तु इसके खुलते ही ग्रंथियों से एक द्रव का टपकना शुरू हो जाता है। धीरे-धीरे यह प्याली इस द्रव से लबालब भर जाती है। कीट-पतंगे प्याली के गूदेदार कोर से आकर्षित होकर पुष्प पर आते हैं। यदि इनमें से कोई कीट फिसलकर प्याली के द्रव में गिर पड़े तो वह प्याली की केवल नुकीली टोंटी के मार्ग से ही बाहर निकल सकता है। टोंटी की ओर तैरते समय पहले तो वह वर्तिकाग्र से टकराता है। यदि उसके शरीर पर परागकण हुए तो इस संपर्क से पुष्प का परागण स्वतः सम्पन्न हो जाता है। इसके पश्चात् प्याली से निकलने के पूर्व तैरता हुआ कीट पुंकेसर के संपर्क में आता है जिससे पराग कणों के गुच्छे इसके शरीर पर लग जाते हैं। इस प्रकार कीट पुष्प का परागण भी कर देता है और उसमें से परागकण भी एकत्र कर ले जाता है।

सड़ते मांस की-सी दुर्गन्ध का आकर्षण

सबसे बड़े पुष्प वाला पौधा रैफ्लीसिया अर्नोलडाई है। यह सुमात्रा के जंगलों में पाया जाने वाला पौधा है। यह मक्खियों को, जो इसका परागण करती हैं, अपने सड़ते मांस की-सी दुर्गन्ध से ही आकर्षित करता है।

पुष्पजाल : मायाजाल

एरिस्टोलोकिया के पुष्पों की विशेष रचना और उसकी सड़े तम्बाकू-जैसी दुर्गन्ध परागण में सहायता प्रदान करती है। दुर्गन्ध से आकर्षित होकर मक्खियां पुष्प के मुख पर आकर बैठती हैं और फिसलकर नली के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

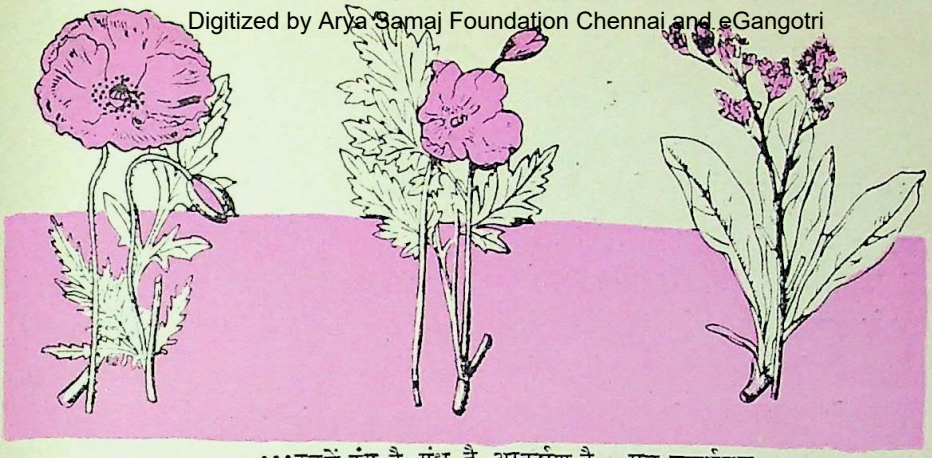

•••इनमें रंग है, गंध है, आकर्षण है—सब स्वार्थवश

फूले हुए भाग पर जा गिरती हैं जहां पुंकेसर तथा स्त्रीकेसर स्थित होते हैं। इसका पुष्प नली के आकार का होता है जिसका निचला भाग फूला हुआ होता है और शिखर बाहर की तरफ फैला हुआ होता है। नली के अन्दर की दीवार पर नीचे की तरफ मुड़े हुए कई कठोर रोम होते हैं। नीचे मुड़े होने के कारण नली के रोम मक्खी के अन्दर आने में तो कोई बाधा नहीं डालते परन्तु वे उसे बाहर नहीं निकलने देते। बाहर निकलने के असफल प्रयास से मक्खी बार-बार वर्तिकाग्र से टकराती है और इस प्रयास में अपने शरीर पर लगे परागकणों को उस पर संचित कर देती है। इस पुष्प के वर्तिकाग्र के परिपक्व होने के लगभग १० घण्टे पश्चात् परागकोश फटते हैं। इसके फटते ही मक्खी का सारा शरीर परागकणों से लद जाता है। इस पुष्प की दूसरी विशेषता यह है कि परागकणों के निकलने के बाद नली के रोम ढीले पड़ जाते हैं। अतएव मक्खी इस पुष्प जाल से बाहर निकल भागती है। अब यदि यही मक्खी उसी पौधे के दूसरे पुष्प पर पहुंच जाय तो उसका परागण भी हो जाता है। युक्का के पुष्प और उसमें परागण करने वाले पतंगे (युक्का मॉथ) में एक निराला सम्बन्ध है। युक्का बिना इस पतंगे के सहयोग से न तो बीज बना सकता है और न ही यह कीट बिना युक्का के अपना जीवनचक्र पूरा कर सकता है। यह पतंगा रात में ही फूलों पर जाता है। एक पुष्प से कई परागकणों को एक गेंद के रूप में अपने सिर के नीचे एकत्र करके यह दूसरे पुष्प पर जा बैठता है। वहां उस पुष्प के अण्डा-

मुखपृष्ठ

क्या इन्हें कुम्हार ने बनाया है ?

नहीं, ये नेपेन्थीज ऐम्पुलेरिया के पुष्प हैं ?

किसी एक पुष्प के मुंह में अंगुली डालिए। अन्दर कोई द्रव है। इसी द्रव के आकर्षण से कीट इसकी ओर आकर्षित होते हैं, लेकिन इस द्रव तक पहुंचकर इसी में रह जाते हैं, क्योंकि यह पुष्प उनका भक्षण कर लेता है।

नेपेन्थीज ऐम्पुलेरिया के पुष्प में परागण की विधि अत्यन्त जटिल है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शय में सर्वप्रथम अपना अण्ड निक्षेपक घुसा-कर अण्डे देता है। इसके बाद स्त्रीकेसर के शिखर पर चढ़कर अपने साथ लाये पराग-कणों की गेंद को वर्तिकाग्र के सुपुर्द कर देता है। इस पतंगे के लार्वा का भोजन केवल एक ही है--युक्का के बीज। लार्वा के प्रौढ़ बनने पर पतंगे अण्डाशय की दीवार को किसी ओर से खाकर उड़ जाते हैं। युक्का के एक पुष्प से इतने बीज बनते हैं कि इनके खाने के बाद भी काफी बीज बच जाते हैं।

तब तक आफरिस का अपना लक्ष्य पूरा हो चुका होता है

आफरिस स्पैकुलम एक आर्किड है। इसके पुष्पों का परागण एक विशेष कीट द्वारा होता है जिसका नाम है कोलपा ओरिया। इन पुष्पों का आकार और इनकी महक हूबहू मादा कोलपा जैसी होती है। नर कोलपा मादा कोलपा से लगभग ८ सप्ताह पूर्व धरती पर निकलते हैं। नये नर कोलपा मादा के भ्रम में आफरिस के पुष्प पर रतिक्रिया की

बहुत से पौधों में परागण पक्षियों द्वारा होता है

कोशिश से आकर इस प्रकार बैठते हैं, मानों सचमुच रतिक्रिया ही कर रहे हों। जब तक मादा कीट धरती के बाहर नहीं निकल आती, ये नर कीट एक पुष्प से दूसरे पुष्प पर विचरण करते रहते हैं और साथ ही परागकणों को भी एक फूल से दूसरे फूल तक पहुंचाते रहते हैं। लगभग आठ सप्ताह बाद जब मादा कोलपा धरती पर आती है तब कहीं जाकर नर कोलपा का यह भ्रम टूटता है। अपनी भूल का आभास होने के उपरान्त वे आफरिस के पुष्पों पर कभी नहीं जाते, किन्तु तब तक आफरिस का अपना लक्ष्य पूरा हो जाता है।

पक्षियों द्वारा परागण

स्टरलिटजिया में परागण पक्षियों द्वारा होता है और किंगेलिया अफ्रीकाना में चमगादड़ द्वारा। परागकणों के वर्तिकाग्र तक पहुंचने को ही परागण कहा जाता है। परन्तु यह तभी सफल माना जाता है जब परागकण स्त्रीकेसर तक पहुंचकर उसका निषेचन भी कर सके। इसी प्रकार पौधों का प्रवर्द्धन होता है। निषेचन के लिए परागकण से एक परागनली निकलती है जो वर्तिकाग्र को भेदकर वर्तिका में होती हुई अण्डाशय में जा पहुंचती है। इसके उपरान्त परागनलिका किसी एक बीजांड में प्रवेश करके अंडकोशिका तक पहुंचती है। यह परागनली ही नर युग्मक को मादा युग्मक तक पहुंचाती है।

कृत्रिम परागण

कृषि-विज्ञान में इसका अलग महत्त्व है। यदि 'अ' पौधे की जाति सुधारने के लिए उसमें 'ब' पौधे के कुछ गुण हस्तांतरित करने हों तो 'अ' के पुष्प वर्तिकाग्र को 'ब' के पराग से कृत्रिम रूप से परागित किया जाता है। पौधे की जाति सुधारने की इस विधि को संकरण कहते हैं। बहुधा कृत्रिम परा-गण द्वारा निषेचन क्रिया नहीं हो पाती। इसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कई कारण हैं, जैसे परागनली निर्माण और उसकी वृद्धि रुकना या फट जाना। इन बाधाओं से मुक्ति पाने के लिए अंततः अंडाशय परागण तथा परखनली परागण का सहारा लेते हैं। पहली विधि में परागकणों को पानी में मिलाकर एक इंजेक्शन लगाने वाली सुई द्वारा अण्डाशय में प्रविष्ट कराया जाता है।

परखनली परागण में बीजाण्डासन पर लगे बीजाण्डों को अण्डाशय से निकालकर परखनली में कृत्रिम माध्यम पर रख दिया जाता है। इसमें कुछ रासायनिक पदार्थ भी डालते हैं जो इसकी वृद्धि में योग देते हैं। कुछ घण्टों बाद परागकोश के परागकण एकत्र करके बीजाण्डों पर छिड़क दिये जाते हैं जो सफल निषेचन करते हैं।

वैज्ञानिक पौधों में कृत्रिम रूप से भी परागण करते हैं

आज वैज्ञानिक परागण की कृत्रिम विधियों के अन्वेषण में लगे हैं। कृत्रिम परागण द्वारा वे पौधों की भिन्न-भिन्न किस्मों के विकास की चेष्टा कर रहे हैं। वह दिन दूर नहीं जब फूल-पौधों के क्षेत्र में क्रान्ति आ सकेगी।

तीव्रगामी पशु-पक्षी

हम अपनी तीव्रगामी कारों, ट्रेनों और वायुयानों पर कितना गर्व करते रहते हैं, परन्तु हम नहीं जानते कि चीता लगभग १०० किमी ओर स्विफ्ट पक्षी १५० किमी की गति से दौड़ सकता है। गरुड़ जब नीचे की ओर शिकार पर तीर की भांति झपटता है तो उसकी गति इन दोनों से बढ़कर होती है। कुछ लोगों की धारणा है कि सर्प दौड़ में घोड़ों से भी आगे निकल जाते हैं। परन्तु उनकी यह धारणा निर्मूल है। सर्प अधिक से अधिक २५ किमी की गति से दौड़ सकता है।

फोल्डिंग साइकिल : पहिये तीन

दो पहिये की साइकिल आते ही बच्चा तीन पहिये की साइकिल को छुट्टी दे देता है, परन्तु तीन पहिये की एक ऐसी साइकिल का आविष्कार हुआ है जिसे बच्चे ही नहीं, बड़े भी बेहद पसन्द करेंगे। यह तीन पहियों वाली साइकिल दो सवारियां बैठाकर स्कूटर की तरह तो दौड़ लगाती ही है, इसे फोल्ड करके अटैची में भी रखा जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उभयचारी वाहन होवरक्राफ्ट

जल-थल पर चलते हुए भी सतह की निर्भरता से मुक्त

प्रसेनजितकुमार गांगुली

यातायात के क्षेत्र में आविष्कृत जिस नये वाहन ने हलचल मचा दी है वह है 'होवरक्राफ्ट'। यह न तो पहियों पर चलता है, न तैरकर। यह हवा के आधार पर चलने वाला वाहन है। इसमें पहिये नहीं हैं, इस कारण घर्षण के प्रभाव से यह मुक्त है। ऐसे वाहन के लिए प्रायः जितनी शक्ति की आवश्यकता होती है उससे कहीं कम शक्ति की आवश्यकता इसमें है।

हवा : वाहन का आधार

यह वाहन सर्वप्रथम ब्रिटेन में तैयार हुआ। इसको इस क्रान्तिकारी यातायात का साधन एक ब्रिटिश वैज्ञानिक क्रिस्टोफर काक्रेल ने १९५३ में बनाया। काक्रेल एक ऐसा वाहन बनाना चाहता था जिसमें घर्षण न हो जिससे कि वाहन के लिए शक्ति की आवश्यकता कम से कम हो। इसमें खर्च और समय दोनों की बचत का लक्ष्य था। इसके लिए उसने हवा को ही वाहन का आधार बनाया।

हालांकि आज भी यह बात सुनने में अजीब लगती है कि किसी वाहन का आधार हवा हो सकती है जबकि वह जल-थल पर चलता हो। उस समय तो यह बात अनोखी थी ही। लेकिन काक्रेल अनुसन्धान-कार्य में लगा रहा और उसे सफलता भी मिली।

यातायात के क्षेत्र में होवरक्राफ्ट ने हलचल मचा दी है

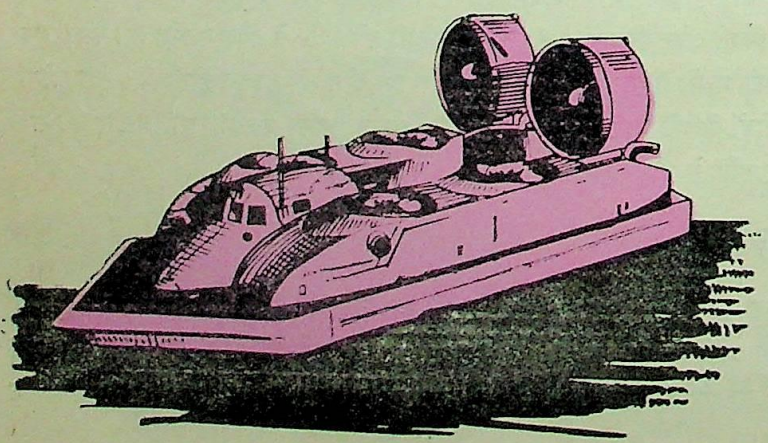

समस्याएं···समस्याएं

अतः सर्वप्रथम काक्रेल के सामने यह समस्या आयी कि वाहन के चलने पर वाहन और धरती के मध्य एक स्थायी हवा की परत कैसे बनी रहे, ताकि वह उस पर टिका भी रहे और चाहे जिस दिशा में चलाया भी जा सके। दूसरी समस्या यह थी कि वाहन को चलने के लिए यदि हवा की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गद्दी पर उठा भी दिया जाये तो रुकने की दशा में वह किस प्रकार धीरे से नीचे आयेगा ?

उन दिनों काक्रेल का अधिकांश समय इलेक्ट्रानिक व्यवसाय में व्यतीत होता था, परन्तु १९५० में उसने अपने इस आविष्कार की समस्याओं पर अधिक ध्यान देने के लिए अपने व्यवसाय को भी छोड़ दिया। नये सिरे से काक्रेल ने एक छोटा कारखाना खोला। व्यवसाय की उन्नति भी अच्छी होती गयी। उस व्यवसाय में उसे होवरक्राफ्ट के विषय में चिन्तन करने का पर्याप्त समय भी मिलने लगा।

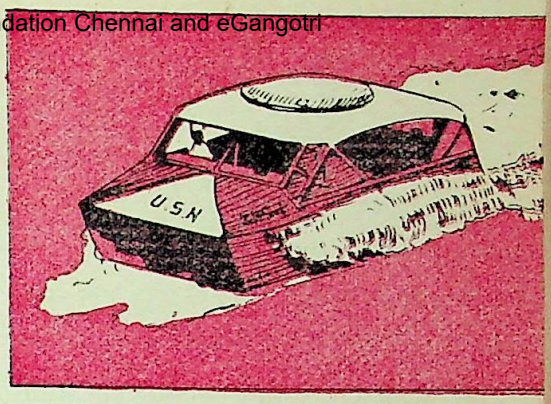

हवा के आधार पर चलने वाला यह वाहन भूमि अथवा पानी पर टिकता हुआ न चलकर एकमात्र हवा के आधार पर टिककर चलता है

आखिर रहस्य मिल गया

तीन वर्ष के कठिन परिश्रम के पश्चात् उसने वाहन को हवा की परत पर उठाये रखने का रहस्य पा लिया। प्रयोगस्वरूप होवरक्राफ्ट का एक छोटा-सा मॉडल उसने बनाया। उसके परीक्षण में उसे आश्चर्यजनक सफलता मिली।

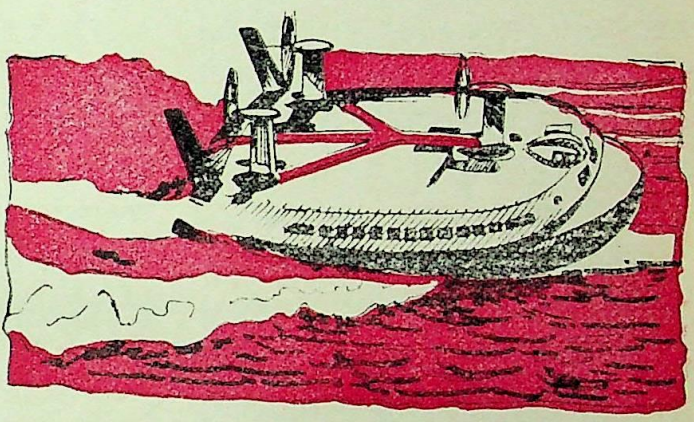

सतह चाहे समुद्री हो, नदी की हो, नाला, झरना, दलदल, मरुस्थल कुछ भी हो, इस वाहन के लिए कुछ भी अगम्य नहीं

तुरन्त ही उसने अपने प्रयोगों को दोहराया और सरकार से बड़े पैमाने पर यह नया वाहन तैयार करने के लिए आवश्यक सहायता भी प्राप्त कर ली। १९५६ में उसने प्रथम मॉडल होवरक्राफ्ट तैयार करके सरकारी विशेषज्ञों को प्रदर्शन देखने हेतु आमंत्रित किया।

काक्रेल ने कमरे में विशेषज्ञों के सामने मॉडल रखा और चला दिया।

हलकी सूं-सूं की ध्वनि करता हुआ वह मॉडल भूमि से कुछ इंच हवा में उठा और कमरे में चलता रहा। आमंत्रित विशेषज्ञ अत्यन्त प्रभावित हुए और काक्रेल को व्यावसायिक स्तर पर होवरक्राफ्ट बनाने की अनुमति तथा अन्य सहायता दे गये।

कुछ भी अगम्य नहीं

हवा के आधार पर चलने का स्पष्ट अर्थ है कि यह वाहन भूमि अथवा पानी पर टिकता हुआ न चलकर एकमात्र हवा के आधार पर टिककर चलता है। फलस्वरूप ऊबड़-खाबड़ सतह पर चल सकता है। सतह चाहे समुद्री हो, नदी की हो, नाला, झरना, दलदल, मरुस्थल कुछ भी हो, इस वाहन के लिए कुछ भी अगम्य नहीं।

आरम्भ में तो होवरक्राफ्ट भूमि से केवल कुछ इंच ही अधर चल सकता था, परन्तु अब तो यह वाहन समुद्री तरंगों की परवाह नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता और दो-तीन मीटर तक की ऊंचाई पर भी चल लेता है।

होवरक्राफ्ट की कार्यविधि सचमुच बड़ी रोचक है। इसके निम्न तल पर पंखे लगे हुए होते हैं। जब उन्हें चलाया जाता है तब वे पूरी गति ले लेने पर वाहन को अधर में उठा लेते हैं, क्योंकि वाहन और सतह के मध्य एक हवाई गद्दी बन जाती है। यह गद्दी इतनी शक्तिशाली होती है कि वाहन का भार सहज ही सम्हाले रहती है। पंखों का वेग घटा-बढ़ाकर वाहन की ऊंचाई घटायी-बढ़ायी जा सकती है। आवश्यक शक्ति इस वाहन को उठाने तथा आगे बढ़ने का कार्य साथ-साथ करती है। हवा पर उठा रहने के कारण यह बहुत आसानी से आगे बढ़ाया जा सकता है और शक्ति का व्यय भी कम ही होता है।

केवल हवा चाहिए

अधिकतर होवरक्राफ्ट भूमि और पानी दोनों पर चलने वाले बनाये जाते हैं। अतः इन्हें दुर्गम भागों पर भी आसानी से चलाया जा सकता है। इसका दूसरा लाभ यह भी है कि इसे कोई विशिष्ट घाट अथवा हवाई पट्टी या सड़क की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसे केवल हवा की आवश्यकता होती है।

१९६२ की गरमियों में प्रथम होवरक्राफ्ट इंग्लैण्ड के किनारे से यात्रियों को लेकर इंग्लिश चैनल पर चला। उसे चैनल पार करने में कुल ४० मिनट लगे, जबकि सामान्यतः अन्य जलयानों को डेढ़ घण्टा लगता है।

इसी सिद्धान्त पर कुछ वैज्ञानिक और भी चमत्कारिक वाहनों के आविष्कार में जुटे हुए हैं। होवरट्रेन सम्बन्धी ऐसा एक प्रयोग प्रायः समाप्ति की ओर बढ़ रहा है। यह एक आश्चर्यजनक ट्रेन होगी जो ४८० किमी प्रति घण्टा की गति से चलेगी।

ये चौंका देने वाली पोशाकें

अत्यन्त प्रारम्भिक अवस्था में चल रहे कुछ प्रयोगों के आधार पर वैज्ञानिकों को आशा है कि वे पोशाकों में चौंका देने वाली क्रान्ति ला सकेंगे। तब यह सम्भव होगा कि आप मनचाहे रंग की प्लास्टिक फुहार अपने शरीर पर ले लीजिए। वही आपकी पोशाक बन जायेगी। शाम को घर लौटकर उसे केले के छिलके की भांति उतार लीजिए और मशीन में डाल दीजिए। दूसरे दिन फिर अपने शरीर पर नयी पोशाक छिड़क लीजिए।

चिकित्सा के क्षेत्र में क्रान्ति

१९३० से पूर्व तो कोई इसे जानता भी नहीं था और इस प्रयोग को आरम्भ हुए अभी १५ वर्ष भी नहीं हुए। युगान्डा के डा. सुलतान करीम ने अमेरिका के डा. केनेथ कार्टन के सहयोग से खोज निकाला है कि हमारे शरीर की प्रोस्टेट ग्रन्थियां अत्यन्त चमत्कारी स्राव देने में समर्थ हैं। इन ग्रन्थियों के नाम पर ही इस नये स्राव का नाम प्रोस्टेग्लेन्डिन रखा गया है। इसे प्राप्त करने की विधि आज भी बड़ी जटिल है परन्तु इसके प्रभावों की ओर से इन चिकित्सकों को आशा है कि मनचाहे रूप से सन्तति-निरोध किया जा सकेगा। जो नर-मादा उर्वर नहीं हैं, उन्हें उर्वर बनाया जा सकेगा। तीव्र रक्तचाप पर नियंत्रण रखकर हृदय रोग की रोकथाम भी हो सकेगी। इसके अतिरिक्त निम्न रक्तचाप को उचित गति देना भी सम्भव होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल-अंगघात

एक घातक शत्रु....

शशिभूषण पाठक

बाल-अंगघात अर्थात् 'पोलियो' अधिकतर छोटे बच्चों को होने वाला एक घातक रोग है। इस रोग में शरीर का कोई भी अंग रक्त-संचार के बन्द हो जाने से निष्क्रिय हो जाता है। यदि अधिक समय तक इसकी चिकित्सा न करायी जाय तो मृत्यु भी हो जाती है। निश्चित रूप से यह रोग बच्चों को विकलांगी तो बना ही देता है तथा विलम्ब से चिकित्सा कराने पर कोई लाभ नहीं होता।

स्वतन्त्र आक्रमण नहीं

यह रोग अधिकतर २ वर्ष से १२ वर्ष तक के बालकों को होता है। यह रोग किसी भी बच्चे पर स्वतंत्र रूप से आक्रमण नहीं करता। प्रायः इसका आक्रमण किसी दूसरे रोग के साथ ही होता है। अतः इसकी उत्पत्ति का प्रारम्भ में कुछ पता नहीं चल पाता। यह रोग मोती-झरा, आंतज्वर, निमोनिया, डिप्थीरिया आदि के साथ संयुक्त हो जाता है।

आधुनिक चिकित्सा विशेषज्ञों के मतानुसार इस रोग के उत्पत्ति विशेष प्रकार के सूक्ष्माणुओं द्वारा होती है जिन्हें 'पोलियो वाइरस' कहते हैं। ये सूक्ष्माणु अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं तथा इन्हें विशेष सूक्ष्मदर्शी द्वारा ही देखा जा सकता है। ज्वर से पीड़ित बच्चों पर इनका आक्रमण इतनी धीमी गति से होता है कि चिकित्सकों को भी अनेक बार आभास नहीं हो पाता। ऐसी स्थिति में अनुमान के आधार पर ही रोग की चिकित्सा की जाती है।

मृत्यु भी हो सकती है

शरीर के विभिन्न सूक्ष्मांगों में तीव्र गति से इनका विकास होता है। पूर्ण रूप से विकसित होने पर ये उन्हें नष्ट करके शरीर के दूसरे भागों में फैलने लगते हैं। अनेक बार रक्त में भी मिल जाते हैं। तीव्र ज्वर की स्थिति में ये मस्तिष्क तक में पहुंचकर तंत्रिका-संस्थान को प्रभावित कर देते हैं तथा स्नायुमण्डल पर हानिकारक प्रभाव डालते हैं। फलस्वरूप शरीर का कोई एक या दो अंग निष्क्रिय हो जाते हैं। अंगों की यह निष्क्रियता स्नायु-मण्डल से संबंधित होती है। इनका आक्रमण सुषुम्ना शीर्ष पर होने से मृत्यु भी हो जाती है।

साधारणतया इस रोग की उत्पत्ति किसी भी समय हो सकती है, परन्तु ग्रीष्म ऋतु में गति तीव्र हो जाती है। आरम्भ में रोगी को तीव्र सिर दर्द, आलस्य ही आलस्य, असाधारण नींद, कम्पन, ऐंठन, हाथ-पांव में पीड़ा तथा वमन आदि लक्षण प्रकट होते हैं। उस प्रारम्भिक अवस्था में इस रोग का स्पष्ट आभास नहीं हो पाता। तीव्र ज्वर होने से रोगी परेशान हो जाता है और उस समय अंगघात (पोलियो) के जीवाणु संक्रमण करते हैं। कभी-कभी तीव्र ज्वर के साथ रोग के पोलियो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाइरस अपना काम करते रहते हैं और रोगी को शरीर में कहीं भी चींटियों के रेंगने-जैसी हलकी सुरसुराहट का अनुभव होता है। साथ ही हलकी खुजली या पीड़ा भी होने लगती है।

पहला आक्रमण फेफड़ों पर

पोलियो के सूक्ष्माणु रोगी के गले और नाक में छिपे रहते हैं। रोग की उग्रता के साथ-साथ ये शरीर में फैलते जाते हैं। सबसे पहले इनका आक्रमण फेफड़ों पर होता है। इससे अनेक रोगियों में निमोनिया के लक्षण प्रतीत होने लगते हैं। धीरे-धीरे इनका प्रसार रीढ़-रज्जु तक पहुंचने लगता है। फलस्वरूप कोशिकाएं नष्ट होने लगती हैं, रक्त-संचार रुकने लगता है और अंगघात के लक्षण स्पष्ट होने लगते हैं।

प्रायः यह रोग मलेरिया और जुकाम के साथ भी हो जाता है। कभी-कभी रोगी एक सप्ताह में स्वयं ठीक हो जाता है, परन्तु फिर कुछ दिन बाद शरीर के किसी एक अंग में हलकी सुरसुराहट होने लगती है। धीरे-धीरे सुरसुराहट बढ़ने से उस अंग का रक्त-संचार रुकने लगता है और अन्त में अंगघात स्पष्ट हो जाता है। कभी-कभी यह इतनी तीव्र गति से चलता है कि श्वास-नलिकाओं तथा ग्रसनिका की पेशियों में एकदम लक्षण स्पष्ट होने लगते हैं। ऐसी अवस्था में लगभग ३० प्रतिशत रोगियों की मृत्यु हो जाती है।

पोलियो वाइरस (आवर्धित रेखानुकृति)

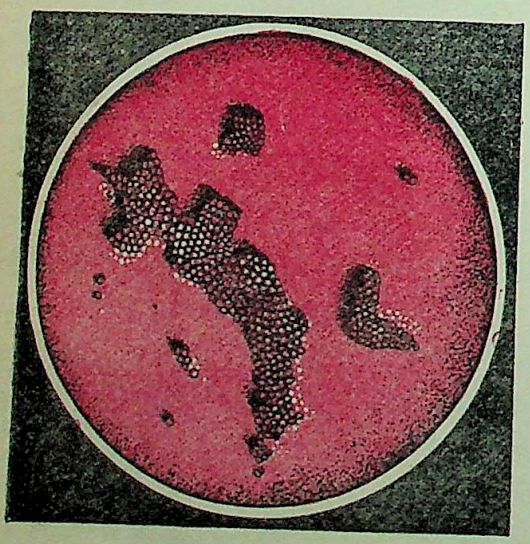

प्रायः चिकित्सक के अज्ञान के कारण साधारण रोगी भी अंगघात के शिकार हो जाते हैं। टायफाइड होने पर रोगी को १०३° से १०६° तक ज्वर हो जाता है। अधिक तीव्र ज्वर होने पर रोगी मानसिक असन्तुलन से प्रभावित होकर उन्माद में बकने लगता है। सामान्य चिकित्सक ऐसी स्थिति में रोगी के सिर पर बर्फ रखने को कह देते हैं। अक्सर इसका परिणाम उलटा ही निकलता है और रोगी गरमी-सर्दी के तीव्र संयोजन में अंगघात का शिकार हो जाता है।

आयुर्वेदिक चिकित्सा

ऐसी अवस्था में पहले ज्वर उतारने की चिकित्सा करनी चाहिए। मानसिक सन्तुलन को बनाये रखने के लिए रोगी को बृहत् वात-चिंतामणि रस अथवा कृष्ण चतुर्मुख रस की गोलियां चिकित्सक की देखरेख में देनी चाहिए। तीव्र ज्वर को शांत करने के लिए रोगी के सिर व माथे पर भृङ्गराज (भांगरा) या आंवला के तेल में कपड़े की पट्टी भिगोकर बर्फ पर ठंडी करके रखनी चाहिए। इस प्रकार रोगी सीधे बर्फ के सम्पर्क से बचा रहता है और ज्वर प्राकृतिक रूप से कम हो जाता है।

आयुर्वेद के अनुसार यह रोग अग्निमन्द होने पर आंव (अपरिपक्व आहार रस) के अधिक बनने से होता है। रक्त में आंव मिलने पर रोग का आरम्भ होता है और रक्त में अनेक प्रकार की विकृतियां उत्पन्न हो जाती हैं। आयुर्वेद के मतानुसार यह आंव शरीर के किसी अंग में स्थिर होकर रह जाता है और उसका रक्त-संचार अवरुद्ध करके उस अंग को निष्क्रिय बना देता है।

ज्वर के साथ इस रोग के लक्षण प्रायः दो-तीन दिन तक स्पष्ट नहीं हो पाते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कई दिनों के बाद इस रोग का वास्तविक आरंभ होता है। सामान्य लक्षणों के आधार पर इस अवस्था को दो भागों में बांट सकते हैं—पूर्व-संस्तंभावस्था, और संस्तंभावस्था।

पूर्व-संस्तंभावस्था

इस अवस्था में ज्वर आकस्मिक रूप से विकसित होता है। इसमें प्रायः १०२° से १०५° तक ज्वर हो जाता है। ज्वर के अतिरिक्त सिर में तीव्र दर्द, शरीर के विभिन्न भागों में पीड़ा, अतिसार तथा वमन आदि विकार भी हो जाते हैं। रोगाणुओं का आक्रमण मांसपेशियों पर होने से गर्दन में तनाव हो जाता है। यह अवस्था मस्तिष्क के भी प्रभावित होने का लक्षण दर्शाती है। इस अवस्था में शरीर में बहुत बेचैनी होती है। रोगी बहुत गरमी अनुभव करता है। कमर में दर्द के अतिरिक्त टूटन अनुभव होती है। कई बार रोग की ऐसी अवस्था में ज्वर स्वयं उतर जाता है। इससे रोगी अपने को स्वस्थ अनुभव करने लगता है, परन्तु यह अवस्था बहुत विश्वासघातक होती है। रोगाणु मनुष्य के शरीर में सक्रिय बने रहते हैं और विष उत्पन्न करते हैं। इसके बाद रोग की दूसरी अवस्था प्रारम्भ होती है।

संस्तंभावस्था

इस अवस्था में ज्वर बिलकुल समाप्त हो जाता है या कई बार बहुत हलका रह जाता है। रोगी स्वयं को बिलकुल रोग मुक्त समझने लगता है, परन्तु उसके अनजाने ही शरीर में रोगाणुओं की सक्रियता से पेशियों में संस्तंभन तीव्र गति से होता रहता है। यह संस्तंभन शरीर के किसी भी एक अंग में हो सकता है। २४ घंटे की अवधि में संस्तंभन की प्रक्रिया पूरी हो जाती है, तब कहीं रोगी को इसका पता चलता है। इसके बाद पेशियों में निष्क्रियता प्रारम्भ हो जाती है। यदि समय पर इसकी चिकित्सा करा ली जाय, तो रोगी रोगमुक्त हो सकता है। यदि निष्क्रिय अंग में रक्त

रोगी के गले और नाक में छिपा शत्रु रोग की उग्रता के साथ-साथ सम्पूर्ण शरीर में फैलता जाता है। पहले यह फेफड़ों पर आक्रमण करता है, फिर·····

संचार पुनः किया जा सके तो वह अंग स्वस्थ भी हो सकता है।

इस दूसरी अवस्था में रोग का सबसे हानिकारक प्रभाव श्वास-संस्थान पर पड़ता है। रोगाणु मस्तिष्क के नीचे की पेशियों में रक्त लाने वाली सूक्ष्म कोशिकाओं को प्रभावित कर देते हैं। इससे वे पेशियां निष्क्रिय हो जाती हैं।

ऐसी स्थिति में बड़ी हानि पहुंचने की सम्भावना रहती है। गले में सूजन हो जाने पर रोगी कुछ खा-पी नहीं सकता। कुछ भी लेने पर उलटी हो जाती है, अथवा सब खाया-पिया नाक द्वारा बाहर निकल जाता है। छाती में रुका बलगम बहुत परेशान करता है। बार-बार खांसी का दौरा उठता है और खांसते-खांसते रोगी को उलटी हो जाती है। कभी-कभी कुकुर खांसी के भी लक्षण प्रकट हो जाते हैं। चित्त में अरुचि बनी रहती है। कई बार वमन मुंह से बाहर न निकलने के कारण लौटकर श्वास नली अथवा दूसरे श्वास मार्गों में भर जाता है। उस समय रोगी को भयंकर खांसी उठती है।

श्वास-संस्थान की पेशियों के रोगग्रस्त हो जाने पर श्वास लेने में बहुत कष्ट होता है। रोगी को दीर्घ श्वास लेने पड़ते हैं। पेशियों की सूजन के कारण श्वास लेने में पीड़ा होती है। शरीर का रंग हलका नीला हो जाता है। यह नीलापन रक्त को श्वास द्वारा पर्याप्त मात्रा में आक्सीजन न मिलने के कारण होता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

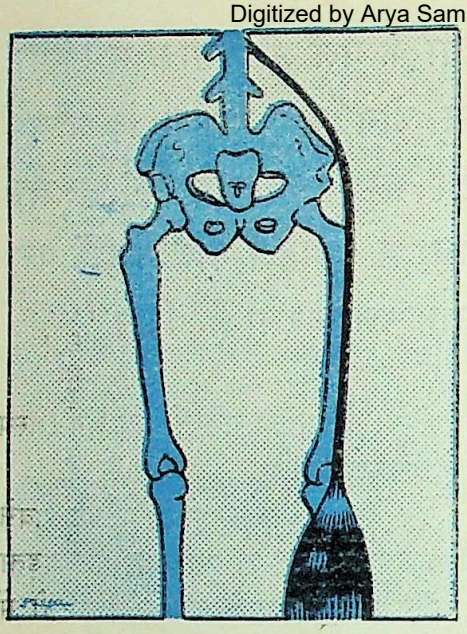

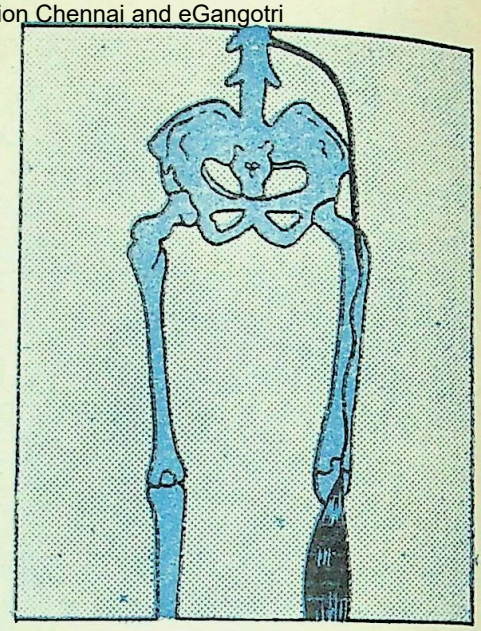

पोलियो के आक्रमण से रोगी के अंग निष्क्रिय हो जाते हैं—(बायें) स्वस्थ पेशी; (दायें) पोलियोग्रस्त पेशी

है। शरीर पर पसीने के कण उभर आते हैं।

रोग की चिकित्सा

प्रारम्भिक अवस्था में इस रोग का निदान नहीं हो पाता, अतः प्रारम्भ में चिकित्सा भी नहीं हो पाती। संक्रमित अवस्था में ही रोग का अनुमान लग पाता है। इसलिए पता लगते ही अन्य रोगों के होते हुए भी अधिक ध्यान-पूर्वक इसी की चिकित्सा करानी चाहिए।

यदि परिवार में किसी बच्चे को यह रोग हो जाये, तो शेष बच्चों को रोगी बच्चे से अलग रखना आवश्यक है। रोगी के सम्पर्क में आने से श्वास द्वारा रोगाणु स्वस्थ बच्चों को भी लग जाते हैं। इसलिए अन्य किसी बच्चे को थोड़ा-सा भी ज्वर होने पर तुरन्त पोलियो-रोधक टीका लगवा देना चाहिए। इस प्रकार रोग पर नियंत्रण रखा जा सकता है। टीका लगवा देने के बाद भी यदि रोग हो जाये, तो उससे अधिक हानि की सम्भावना नहीं रहती।

प्रामाणिक औषधियों का उल्लेख नहीं

एलोपैथी में इस रोग की चिकित्सा के लिए प्रामाणिक औषधियों का उल्लेख नहीं मिलता। एलोपैथी के चिकित्सक इस रोग में पहले तो ज्वर को उतारने के लिए एस्प्रीन का उपयोग करते हैं। एस्प्रीन से ज्वर शीघ्र उतर जाता है परन्तु अन्य सावधानियां अत्यन्त आवश्यक हैं। एस्प्रीन खाने के बाद रोगी को जोर से पसीना आता है। सारा शरीर पसीने से भीग जाता है। उस समय रोगी अधिक गरमी व बेचैनी अनुभव करता है और कई बार गरमी से परेशान होकर अपने वस्त्र उतार देता है और खुली हवा में निकल आता है। इसके परिणामस्वरूप रोगी को अधिक हानि उठानी पड़ती है। असंतुलित गरमी-सर्दी हो जाने से पुनः ज्वर हो जाता है जो पहले से भी अधिक तीव्र और कष्टदायक होता है। इसलिए ज्वर में एस्प्रीन का उपयोग करते समय इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखना आवश्यक है।

वयस्कों में भी

रोगी को पूर्णतया विश्राम करना चाहिए। रोग से प्रभावित अंग को बालू की थैलियों के सहारे रखा जाता है। रक्त-संचार के लिए विद्युतधारा भी प्रवाहित की जाती है। एलोपैथी के मतानुसार वयस्कों में यह रोग कभी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोलियो एक घातक शत्रु है, लेकिन बच्चे को पोलियो वैक्सीन देकर उसे इस रोग से सुरक्षित रखा जा सकता है--(चित्र) बच्चे को मुंह के रास्ते पोलियो वैक्सीन दिया जा रहा है

कभी रक्त चाप के अधिक या कम होने से भी हो जाता है। ऐसी स्थिति में रोगी के रक्त चाप की भी चिकित्सा करनी चाहिए।

आयुर्वेद की दृष्टि से यह रोग आंव, कफ तथा भेद की विकृति से सम्बन्धित है। इसलिए इसकी चिकित्सा भी इन्हीं दोषों को शांत करने की दृष्टि से की जाती है।

आयुर्वेदिक चिकित्सा दो प्रकार से की जाती है--औषधियों द्वारा तथा मालिश, व्यायाम आदि द्वारा। चिकित्सा से पूर्व रोगी को हलका विरेचन दिया जाता है परन्तु टायफाइड विरेचन नहीं देना चाहिए।

पूर्व-संस्तंभावस्था में रोग की चिकित्सा सरलता से हो सकती है। इस अवस्था में ज्वरनाशक औषधियां देनी चाहिए, क्योंकि ज्वर नष्ट हो जाने पर रोग के संक्रमण की अधिक सम्भावना नहीं रहती। आयुर्वेद में ज्वर को शांत करने के लिए साधारण अवस्था में लक्ष्मी विलास रस अथवा कस्तूरी भैरव रस की गोलियां देते हैं। इस रोग में ज्वर वात प्रधान होता है, अतः कभी-कभी जोर से सर्दी लगने पर कंपकंपी होने लगती है।

रोग की अधिक तीव्र अवस्था में रोगी मस्तिष्क का सन्तुलन खो बैठता है तथा उन्मादित बकवास करने लगता है। उस समय रोगी को बहुत बार चिंतामणि रस या कृष्ण चतुर्मुख रस की गोलियां देनी चाहिए। रोगी के हृदय की धड़कन को स्थिर रखने के लिए प्रवाल पिष्टी (भस्म) मधु (शहद) के साथ चटाइए। इससे चित्त शांत हो जाता है तथा हृदय को शक्ति मिलती है। रोगी के ज्वर को शांत करने तथा खुश्की कम करने के लिए सिर पर भांगरा के तेल की मालिश करनी चाहिए। यदि किसी चिकित्सक के निरीक्षण में चिकित्सा करायी जाये तो अधिक उपयोगी रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगी का विशेष ध्यान रखना चाहिए

इस रोग के आक्रमण से आंत व मूत्राशय भी निर्बल हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में रोगी का विशेष ध्यान रखना चाहिए । शारीरिक निर्बलता को दूर करने के लिए शक्तिवर्द्धक औषधियां देनी चाहिए। अस्पताल में रोगी को ग्लूकोज भी चढ़ाया जा सकता है । घरों में रोगी को ग्लूकोज पानी में घोलकर दिया जा सकता है। इससे मूत्र त्याग की शक्ति भी बराबर बनी रहती है । एलोपैथी में नियोस्टिगामिन (Neostigmine) अनैच्छिक पेशियों की शक्ति बढ़ाने में बहुत उपयोगी है ।

पांव में अंगघात होने पर नियमित रूप से मालिश करनी चाहिए और जब कुछ-कुछ शक्ति बढ़ने लगे तो रोगी से 'साइकिल' चलाने का अभ्यास कराना चाहिए

मूत्राशय की निर्बलता से कभी-कभी रोगी को मूत्र आना बन्द हो जाता है। रोगी के बार-बार मूत्र करने पर भी मूत्र बाहर नहीं निकलता है । मूत्राशय में अधिक मूत्र एकत्र होने से रोगी को बहुत पीड़ा होती है। ऐसी स्थिति में जब भी मूत्राशय में मूत्र की मात्रा बढ़ी हुई प्रतीत हो, तो उसी समय 'केथेटर' नलिका प्रविष्ट कर मूत्र निकाल देना चाहिए ।

अंगघात होनें पर रोगी को सर्दी से विशेष सुरक्षित रखना चाहिए, क्योंकि सर्दी से रोगाणुओं की प्रक्रिया तीव्र होती है । इससे रोग का संक्रमण शीघ्र होता है । इसलिए रोगी को कोई शीतल पेय या खाद्य नहीं देना चाहिए। शरीर के जिस भाग में अंगघात हुआ हो उस पर गरम तेल की मालिश करनी चाहिए। आयुर्वेद में नारायण तेल बहुत उपयोगी माना गया है । गन्धक के तेल की मालिश भी बहुत लाभ पहुंचाती है ।

ऐलोपैथी के विशेषज्ञ भी रक्त संचार के लिए नियमित मालिश को उपयोगी मानते हैं । इससे अधिकांश रोगी पुनः स्वस्थ हो जाते हैं। जब उस भाग में हलका-हलका रक्त संचार होने लगे तो धीरे-धीरे रोगी को चलने-फिरने का अभ्यास कराना चाहिए । हाथों में अंगघात होने पर मालिश करके हाथों से कोई नियमित व्यायाम करायें। पांव में अंगघात होने पर नियमित मालिश करें। जब कुछ-कुछ शक्ति बढ़ने लगे, तो रोगी से 'साइकिल' चलाने का अभ्यास करवाना चाहिए ।

सूर्य की किरणों में आरोग्य शक्ति

रोगी को अत्यधिक धूप सेवन करायें । धूप-सेवन से रोगी में आरोग्य के लक्षण विक-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सित होते हैं। विशेषज्ञों के अनुसार सूर्य की किरणों में रोगग्रस्त पेशियों को स्वस्थ बनाने की अद्भुत शक्ति होती है। नियमित धूप-सेवन से रक्त-संचार में शीघ्र लाभ होता है। इससे शरीर को पर्याप्त मात्रा में विटामिन 'डी' प्राप्त होता है।

इस रोग में रोगी मानसिक रूप से अधिक विकृत हो जाता है। अनेक रोगी मानसिक सन्तुलन तक खो बैठते हैं। टायफाइड रोग में तीव्र ज्वर होने पर अक्सर ऐसा हो जाता है। इसलिए रोगी को मानसिक रूप से पीड़ित नहीं होने देना चाहिए। यदि रोगी बालक हो तो उसके साथ कभी डांटडपट नहीं करनी चाहिए। रोगी के मनोबल को सदैव ऊंचा बनाये रखें। इससे शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ होता है। वास्तव में यह रोग हो जाने पर रोगी एक विशेष प्रकार की मनोवैज्ञानिकता से ग्रस्त हो जाता है। वह अपने को विवश, लाचार और कमजोर समझने लगता है। यदि परिवार के लोग भी उसे ऐसा ही समझें तो उसका उत्साह भंग हो जाता है और वह लगातार निराशा के गर्त में गिरता चला जाता है। रोगी को उसकी विवशता, लाचारी और कमजोरी का भान नहीं होने देना चाहिए। रोगी के मनोरंजन के लिए भी प्रबन्ध करना चाहिए। थोड़ी-सी सावधानी रखकर आप किसी रोगी को जीवन भर के लिए पंगु (अपाहिज) होने से बचा सकते हैं।

रोगी का मनोबल सदैव ऊंचा रखना चाहिए। इससे शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ होता है

मोटर चलेगी, नहीं चलेगी···

अमेरिका की जनरल मोटर्स ने ऐसी कारें बनायी हैं जिन्हें शराब पीकर चला पाना सम्भव नहीं होगा।

वास्तव में कार-चालक को कुछ अंक याद रखने पड़ेंगे। पहले की-बोर्ड पर चालक को पांच अंक पंच करने पड़ेंगे। फिर कुछ सेकण्डों तक परदे पर उसे कोई भी पांच अंक दिखायी पड़ेंगे। इन अंकों में से क्रमानुसार एक सही संख्या का चुनाव करके उसे की-बोर्ड पर पंच करना पड़ेगा। अगर तीन बार में भी कार-चालक सही संख्या का चुनाव नहीं कर पाता, तो फिर कार कई घन्टों तक स्टार्ट नहीं होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अविनाशचन्द्र शर्मा

आपने रात के समय आकाश में तारों को टूटते हुए अवश्य देखा होगा। ये आकाश में जलती लकीर की तरह सरसराते हुए लुप्त हो जाते हैं। वास्तव में ये तारे नहीं हैं। असली तारे कभी नहीं टूटते। साथ ही वे हमसे अरबों मील दूर भी हैं। ये टूटते कथित 'तारे' तो हमारे बहुत निकट हैं। इनका प्रकाश तारे जैसा होता है तथा ये सरकते दिखायी पड़ते हैं। इसीलिए हम इन्हें टूटते तारे कह देते हैं। वास्तव में ये उल्काएं हैं।

जलता हुआ उल्कापिण्ड : तीव्र प्रकाश की एक रेखा

हमारे सौरमण्डल में असंख्य उल्काएं सूर्य के चारों ओर घूमती रहती हैं। जब कभी कोई उल्का पृथ्वी के समीप से गुजरती है तो गुरुत्वाकर्षण के कारण हमारी ओर खिंची आती है। पृथ्वी के वातावरण में प्रवेश करते ही, घर्षण से तप्त होकर प्रकाशमान हो जाती है और फलस्वरूप धरती तक पहुंचने से पहले ही वह जलकर राख हो जाती है या विस्फोट के साथ फट जाती है। इस प्रकार जलता हुआ उल्कापिण्ड तीव्र प्रकाश की एक रेखा बनाता है। उस समय ऐसा प्रतीत होता है मानो तारा ही टूटा हो। ये उल्काएं बहुत छोटी भी होती हैं, बड़ी भी। प्रायः जब ये धरती से लगभग १२८ किलोमीटर की दूरी पर होती हैं तब दिखायी देती हैं और ८० किलोमीटर तक आते-आते जलकर राख हो जाती हैं। कुछ बड़ी और तेजस्वी उल्काएं ३२ किलोमीटर तक भी निकट आ जाती हैं। छोटी-छोटी उल्काएं तो प्रतिदिन लाखों-करोड़ों की संख्या में हमारे वातावरण में घुस आती हैं। परन्तु वे सब ऊपर ही ऊपर आकाश में जलकर राख हो जाती हैं। इन प्रतिदिन गिरने वाली करोड़ों उल्काओं का कुल वजन केवल २५ क्विंटल के लगभग होता है। इनके गरने का क्रम दिन-रात चलता ही रहता है परन्तु दिन के समय सूर्य के प्रकाश में हम इन्हें देख नहीं पाते।

उल्का-वर्षा का एक सुन्दर दृश्य

कई उल्काएं आकाश में टोली बनाकर एक निश्चित कक्षा में सूर्य के चारों ओर घूमती हैं। कुछ ऐसी भी होती हैं जो अकेली ही भटकती रहती हैं। जब कभी हमारी पृथ्वी उल्काओं के किसी झुण्ड के समीप से गुजरती है तो अनेक उल्काएं गुरुत्वाकर्षण से हमारे वायुमण्डल में खिंच आती हैं। तब उल्का-वर्षा का एक सुन्दर दृश्य उपस्थित होता है। वह दृश्य देखने योग्य होता है। कभी-कभी आकाश के किसी निश्चित स्थान से अनेक उल्काएं गिरती हैं। उल्काओं की ऐसी वर्षा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को 'उल्का वृष्टि' कहते हैं। ये ऐसे कई बार आते हैं। उनमें से दो प्रसंग विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, एक प्रति वर्ष १६ नवम्बर के आसपास और दूसरा १२ अगस्त के आसपास। इन दिनों आधी रात के बाद बहुत बड़ी संख्या में उल्काएं आकाश के एक निश्चित स्थान से झरती हैं। नवम्बर मास की उल्काएं सिंह राशि से गिरती हैं और अगस्त मास की उल्काएं ययाति मण्डल से गिरती हैं। रायल एस्ट्रानामिकल सोसायटी द्वारा ऐसी १४ उल्का-वर्षाएं रिकार्ड की गयी हैं जो प्रति वर्ष निश्चित तारीख को दिखायी देती हैं। इनमें से आठ उल्का वृष्टियों का सम्बन्ध निश्चित रूप से धूमकेतुओं से है। उल्का वृष्टियों के नाम उनके झरने की स्थिति के अनुसार रखे जाते हैं।

अन्तरिक्ष में स्थित उल्काओं के समूह

सबसे भारी उल्का वृष्टि १८३३ की १२ नवम्बर को रिकार्ड की गयी। उस वृष्टि में २,००,००० उल्काएं प्रति घण्टे आकाश में एक ही स्थान से आती दिखायी दी थीं। उल्काएं सिंह (Leo) राशि से आ रही थीं, इसीलिए उस वर्षा का नाम लियोनाइड उल्का वृष्टि रखा गया। उससे पहले वैसी ही एक उल्का वृष्टि १७९९ में हुई थी। गणना से ज्ञात किया गया है कि उल्काओं के ये समूह अन्तरिक्ष में ऐसे स्थान पर स्थित हैं जहां से हमारी पृथ्वी प्रति ३३ वें वर्ष गुजरती है।

छोटी-छोटी उल्काएं तो वायुमण्डल में ही समाप्त हो जाती हैं, परन्तु कुछ उल्काएं इतनी बड़ी और भारी होती हैं कि वे वायुमण्डल में पूरी तरह से जल नहीं पातीं तथा ये अधजले

छोटी-छोटी उल्काएं तो वायुमण्डल में ही समाप्त हो जाती हैं, परन्तु कुछ उल्काएं इतनी बड़ी होती हैं कि वे वायुमण्डल में पूरी तरह से जल नहीं पातीं और अधजले रूप में धरती तक पहुंचती हैं

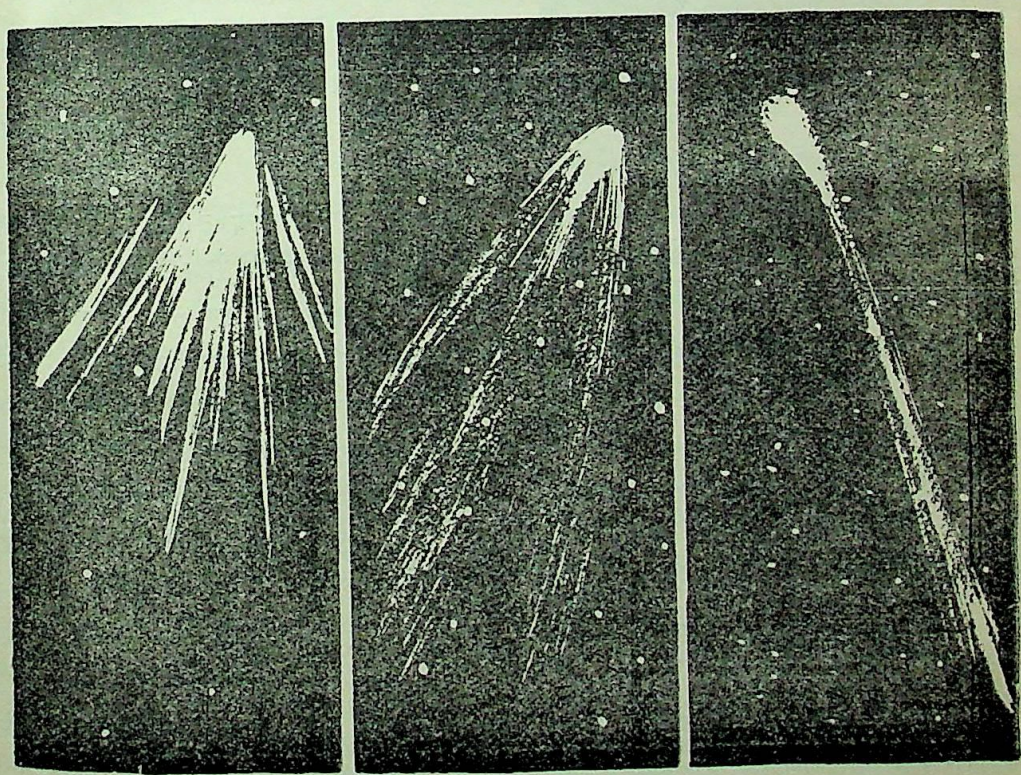

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

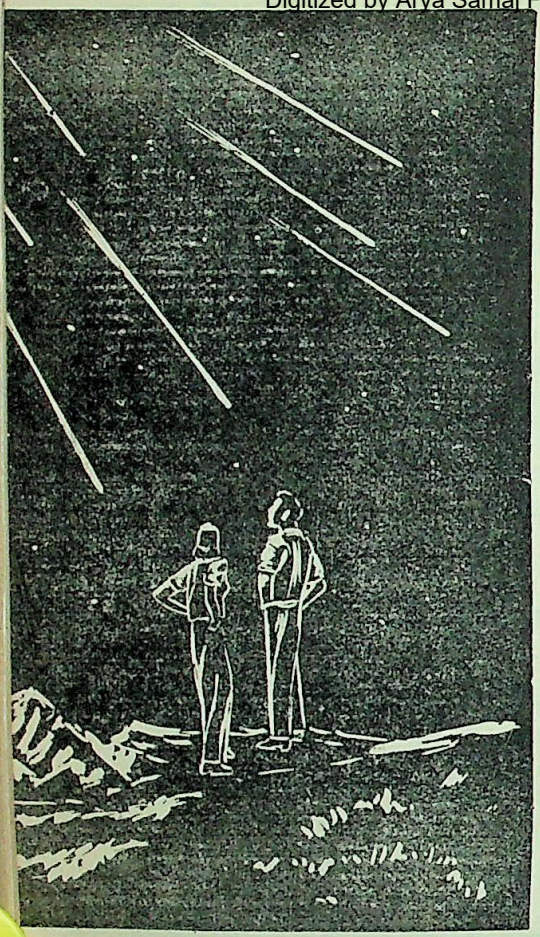

रात्रि के आकाश में टूटते तारे अजीब लगते हैं

रूप में धरती तक पहुंचने में समर्थ हो जाती हैं। इन अधजली उल्काओं को 'उल्काश्म' कहते हैं। संसार के सभी बड़े-बड़े संग्रहालयों में ऐसे उल्काश्म सुरक्षित रखे गये हैं। सौभाग्यवश अभी तक के उल्कापातों में किसी जन-हानि का उल्लेख नहीं मिलता।

जालन्धर के पास उल्का गिरी थी

सम्राट् जहांगीर के समय में जालन्धर के पास एक उल्का गिरी थी। गिरने के पश्चात् वह धरती में काफी गहरी धंस गयी। खुदाई करने पर वहां पर लोहे का एक बड़ा गोला प्राप्त हुआ। सम्राट ने उस लोहे से अपने लिए एक तलवार बनवायी। यह तलवार लाहौर के अजायबघर में आज भी सुरक्षित रखी हुई है।

कैप्टन पियरे ने ग्रीनलैण्ड में एक बड़ी उल्का शिला देखी। वह कब गिरी, किसी को पता नहीं। पियरे उसे बड़ी कठिनाई से न्यूयार्क ले गया। उसका नाम 'केपयार्क उल्का' रखा गया। आज भी वह वहां के संग्रहालय में रखी है। उसका वजन ३५ टन के लगभग है। उससे भी बड़ी एक अन्य उल्का शिला दक्षिणी अफ्रीका में पायी गयी। उसका नाम 'ग्रुटफान्टेन उल्का' है। वजन में यह लगभग ७० टन है।

पृथ्वी पर गिरते ही तीन टुकड़े

१७ फरवरी १९३० की रात को आर-कैन्सास (अमेरिका) में उल्कापात हुआ। उसका प्रकाश इतना प्रखर था कि आसपास चारों ओर तेज धूप-सी फैल गयी। पृथ्वी पर गिरते ही उसके तीन टुकड़े हो गये। अन्य छोटे-छोटे टुकड़े हाथ न लगे। तीन टुकड़ों में से सबसे बड़ा टुकड़ा लगभग ८०० पौण्ड का था। उससे छोटा ८० पौण्ड का और सबसे छोटा टुकड़ा लगभग १० पौण्ड का था। ८० पौण्ड वाला टुकड़ा पौन मीटर धरती में धंसता चला गया। सबसे बड़ा टुकड़ा २ मीटर से भी अधिक धंस गया था।

८००० वर्ग किमी का जंगल जलकर राख हो गया

एक उल्का शिला ३० जून १९०८ को साइबेरिया में एक नदी से ६० किलोमीटर दूर गिरी थी। उसने वहां पर ८००० वर्ग किमी के जंगल को जलाकर राख कर दिया। उसके गिरने से उत्पन्न हुए कम्पन को १८००० किमी की दूरी तक रिकार्ड किया गया। उल्का-पात का घनघोर नाद १५०० किमी की दूरी तक सुना गया और प्रकाश १००० किमी तक देखा गया।

उस उल्कापात से लोग इतना डर गये थे कि पूरे २० वर्षों तक किसी ने उल्कापात के केन्द्र की तरफ जाने का साहस नहीं किया। २० वर्ष बाद वैज्ञानिकों का एक दल वहां गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

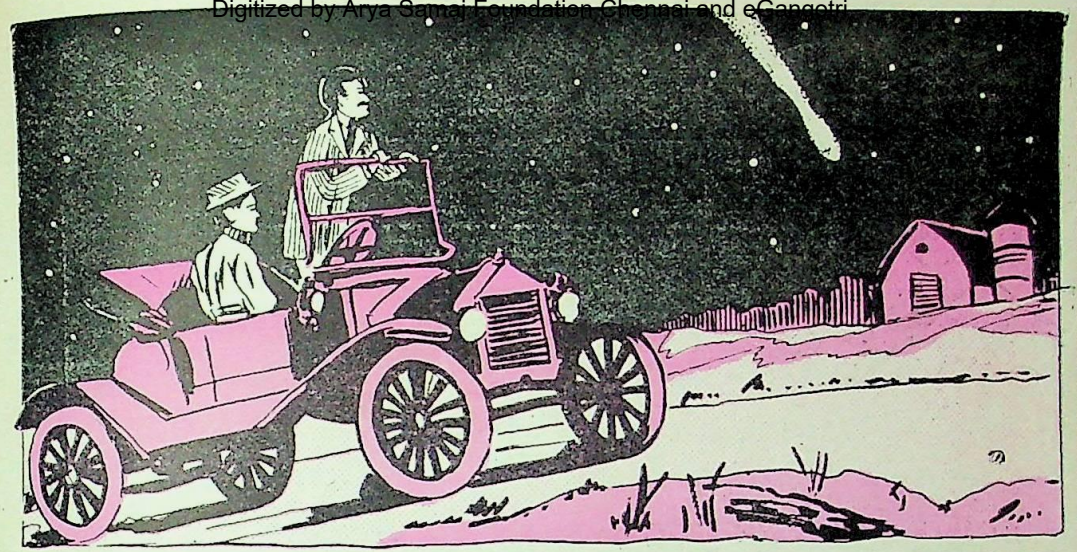

वह उल्कापात भयानक था। २० वर्षों तक किसी ने उल्कापात के केन्द्र की तरफ जाने का साहस नहीं किया

वह एक खौफनाक उल्कापात था

अमेरिका के 'ऐरिजोना' नामक स्थान में आज से लगभग ५०,००० वर्ष पहले एक खौफनाक उल्कापात हुआ। इससे २०० मीटर गहरा, १२०० मीटर लम्बा-चौड़ा और ४५ मीटर ऊंची कगार वाला गड्ढा बन गया। यह आज भी देखा जा सकता है। इस गड्ढे को 'ऐरिजोना उल्का गर्त' या 'बेरिजर उल्का गर्त' कहते हैं। ऐरिजोना उल्का गर्त का कगार ३२ किलोमीटर दूर से देखा जा सकता है।

उल्काओं के विषय में वर्तमान मान्यता है कि अधिकांश उल्काओं का सम्बन्ध धूमकेतु अथवा क्षुद्र ग्रहों से है, परन्तु फिर भी धरती पर पहुंच जाने वाले बड़े-बड़े उल्का-खण्डों की उत्पत्ति दूर अन्तरिक्ष में ग्रह-नक्षत्रों के टूटने से हुई मानी जाती हैं। ये उल्काएं पत्थर और लोहे के बने हुए आकाशीय पिण्ड हैं। विभिन्न देशों में गिरी उल्काओं का अध्ययन करने से पता चला है कि उनका अधिकांश भाग लोहे अथवा लौह-पत्थर मिश्रण से बना हुआ है। इसके अतिरिक्त उल्काओं में रेत, कार्बन, कोबाल्ट, निकिल आदि भी पाये जाते हैं। अपवादस्वरूप कभी-कभी प्लेटिनम भी प्राप्त हो जाता है।

पृथ्वी पर पाये गये उल्का-खण्डों के वैज्ञानिक परीक्षणों के बाद वैज्ञानिकों ने बताया कि वे उल्काएं ४·७ अरब वर्ष पुरानी हैं। यह आयु पृथ्वी तथा चन्द्रमा की आयु के बराबर है। अपोलो अन्तरिक्षयात्रियों के द्वारा लाये गये चन्द्र भू-खण्ड को भी वैज्ञानिकों ने ४ अरब ६० करोड़ वर्ष पुराना बताया है। यह इस बात को प्रमाणित करता है कि ये सभी आकाशीय पिण्ड एक ही समय में ठण्डे होकर ठोस के रूप में आये।

एक महान अन्धविश्वास

कई अन्धविश्वासी व्यक्ति उल्काओं के देखने को अपशकुन मानते हैं। उल्का के पत्थर को घर में रखना कई लोग अच्छा और कई बुरा मानते हैं। वास्तव में ऐसा कुछ भी नहीं है। उल्का के पत्थर को घर में रखने से किसी भी तरह के अच्छे या बुरे प्रभाव की सम्भावना नहीं है। साधारण व्यक्ति के लिए उल्काएं निश्चित रूप से अनुपयोगी पत्थर हैं। उल्काओं का उपयोग यदि किसी के लिए है तो केवल वैज्ञानिकों, अनुसन्धानकर्ताओं तथा खगोलशास्त्रियों के लिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महानतम वैज्ञानिक थामस एल्वा एडीसन

जिसका जीवनसूत्र था: एक बूंद प्राण सौ बूंद पसीना

सत्यकुमार, एम. एस-सी., पी-एच. डी.

एडीसन का जन्म ११ फरवरी १८४७ को अमेरिका के ओहायो प्रदेश के मिलननामक स्थान में हुआ था। उसके पिता का लकड़ी का छोटा-सा कारोबार था। उसकी शिक्षा-दीक्षा विशेष नहीं हो पायी थी। जब वह सात वर्ष का था तभी उसके अध्यापक ने यह कहकर पढ़ाना छोड़ दिया था कि 'यह तो बिलकुल मूर्ख है'। उसके पश्चात् उसकी मां ने ही उसे पढ़ना-लिखना सिखाया। एडीसन को विद्यालयी शिक्षा भले ही न मिली, परन्तु उसकी वैज्ञानिक प्रतिभा का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि उसने अपने जीवनकाल में अमेरिकी पेटेन्ट आफिस से १०९७ खोजों के पेटेन्ट कराये थे, जो उसका अपना अजेय रिकार्ड था। वह कथित 'मूर्ख' लड़का जीवन भर घर में, यात्रा में, यहां तक कि मृत्यु शय्या पर भी पढ़ता ही रहा था—नये-नये विषयों पर नयी-नयी वैज्ञानिक पुस्तकें।

वह खुद अंडा सेने बैठ गया

पूत के पैर पालने में ही दीखने लगते हैं। पांच वर्ष की आयु में एक दिन उसने पड़ोस के बाड़े में बतखों को अण्डे सेते देखा। दूसरे दिन वह स्वयं जाकर अण्डे सेने बैठ गया। घरवालों ने जब उसकी खोज-खबर ली तो वह दस घण्टों तक खुले में बैठे-बैठे नीला पड़ गया था। बारह वर्ष की आयु में वह अपने पैरों पर खड़ा हो गया था। नित्य नयी वैज्ञानिक पुस्तकें तथा अपनी प्रयोगशाला के लिए उपकरण खरीदने के लिए उसे पैसों की आवश्यकता पड़ती थी। अतः उसने ट्रेन में समाचारपत्र, टॉफी आदि बेचना प्रारंभ कर दिया। अपनी कुशाग्र व्यापारिक बुद्धि से उसने तीन वर्ष में इतना कार्य बढ़ा लिया कि स्वयं तो वह निरीक्षण ही करता था। सारा कार्य उसके कर्मचारी करते थे और वह पूरी यात्रा में पुस्तकें पढ़ता रहता था। जैसे ही कुछ पैसा इकट्ठा हुआ, उसने एक छोटा-सा पुराना प्रेस भी खरीद लिया। माल गाड़ी के एक डिब्बे में प्रेस लगाकर उसने 'वीकली हेराल्ड' नाम से साप्ताहिक निकालना आरंभ कर दिया। यह पत्र पर्याप्त सफल हुआ और इसकी आय से उसने प्रेस के साथ गाड़ी के डिब्बे में ही अपनी प्रयोगशाला भी जमा ली। वह चलती गाड़ी में ही अपने प्रयोग करता रहता था। गाड़ी के झटकों से एक दिन उसका कोई रसायन भरा जार फट गया। उसके ज्वलनशील पदार्थ ने आग पकड़ ली। पत्र के कागजों ने उसे और भड़काया। जैसे-तैसे आग बुझी और एडीसन की उस प्रयोगशाला का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तिम परिच्छेद असमाप्त रहे गया।

एक तारबाबू : एक वैज्ञानिक

एक तारवाबू की कृपा से एडीसन ने टेलीग्राफ सीख लिया। परन्तु उस-जैसे वहरे व्यक्ति के लिए यह कार्य वहुत कठिन था। ट्रेन में समाचारपत्र वेचने के दिनों में एक वार जव वह चलती गाड़ी में चढ़ रहा था, तो एक सहृदय व्यक्ति ने इस 'वच्चे' को दोनों कान पकड़कर ऊपर खींच लिया था। तभी से उसके दोनों कान बेकार हो गये थे। फिर भी उसने टेलीग्राफी में ५५ शब्द प्रति मिनट की गति प्राप्त कर ली थी, जो उस समय की अधिकतम थी। उसे तारवाबू का कार्य सहज ही मिल गया। शेष समय वह अपने प्रयोगों में लगा रहता था।

गोल्ड एक्सचेंज की अंधेरी कोठरी···और···

२१ वर्ष की आयु में उसने अपना पहला आविष्कार पेटेन्ट कराया। वह था विद्युत द्वारा मतपत्रों की गिनती करने वाला उपकरण (इलेक्ट्रिक वोट रिकार्डर)। उसी वर्ष उसने एक ही तार पर समानान्तर दो सन्देश भेजने वाला 'प्रेषी' (ट्रान्समीटर) वनाया, परन्तु दुर्भाग्य से इसका पेटेन्ट एक अन्य व्यक्ति करा ले गया। एडीसन को वड़ा धक्का लगा और वह किराये के लिए पैसे उधार लेकर न्यूयार्क पहुंच गया। खाने-ठहरने की कोई व्यवस्था नहीं, पैसा पास नहीं। एक मित्र की कृपा से 'गोल्ड एक्सचेंज' की एक अंधेरी कोठरी में रात काटने को जगह मिल गयी। वहां दिन-रात खटखट होती रहती थी। सोने की तेजी-मन्दी के समाचार प्रतिपल आते रहते थे। तीसरे दिन भूखा-प्यासा वह काम की तलाश में निकल रहा था कि एक्सचेन्ज की मशीन ठप्प हो गयी। एक्सचेंज के वाहर भीड़ इकट्ठी होने लगी। मिस्त्री लोग समझ नहीं पा रहे थे कि कहां क्या खराबी आ गयी। उत्सुकतावश एडीसन भी पहुंच गया। उसने एक उड़ती दृष्टि डाली और लापरवाही से मैनेजर से बोला, 'सम्पर्क कमानी टूटकर गीयर में जा पड़ी है।' मेनेजर इस गन्दे कपड़े पहने व्यक्ति को भौचक देखता रहा। उसके कहने पर थोड़ी-सी देर में ही एडीसन ने मशीन ठीक कर दी। उसी क्षण उसे ३०० डालर प्रति माह पर मशीन का निरीक्षक नियुक्त कर लिया गया। एडीसन ने कुछ दिनों वाद अपना निजी विद्युत इंजीनियरी का कार्य प्रारंभ कर दिया। वहां से वह अच्छे वेतन पर 'गोल्ड एण्ड स्टाक टेलीग्राफ कम्पनी' में चला गया। वहां उसका कार्य मशीनों की मरम्मत करना तथा उन्हें सरल वनाना था। कुछ ही महीनों में उसने 'एडीसन यूनिवर्सल प्रिन्टर' वना डाला, जिसके मूलभूत सिद्धान्त आज भी काम आते हैं। २२ वर्षीय आविष्कारक को इस खोज का पुरस्कार ४०,००० डालर मिला, जवकि वह ३ या ४ हजार डालर की ही कल्पना कर रहा था। पूंजी हाथ लगते ही उसने अपना पृथक व्यापार प्रारंभ कर दिया। वह अपने कर्मचारियों को अधिकतम वेतन देता था, परन्तु

प्रारम्भ में एडीसन ने जो वल्ब बनाये वे आज देखने में अनोखे लगते हैं

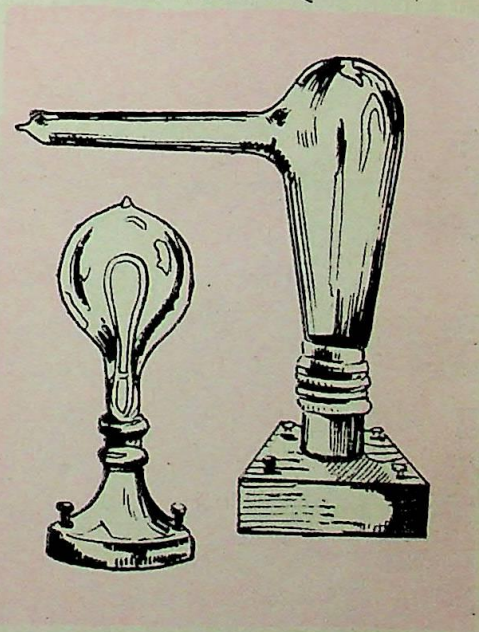

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्तूबर १८७९--एडीसन की महान विजय : उसने जिस वल्ब का आविष्कार किया वह लगातार ४ घंटे तक जलता रहा

काम भी कस कर लेता था। उसे घड़ी की ओर ताकते रहने वालों से चिढ़ थी। वह अपने कारखाने में स्थान-स्थान पर ५-६ दीवार घड़ियां लगवा देता था, जो भिन्न-भिन्न समय बताती थीं।

| २५ दिसम्बर १८७१ को अपनी ही एक दुकान में कार्य करने वाली लड़की मेरी स्टिवेल से उसने विवाह कर लिया। यह विवाह अति सुखद रहा।

१८७६ में एडीसन ने न्यूयार्क से ४० किमी दूर 'मेनलो पार्क' में अपनी प्रयोगशाला स्थानान्तरित कर ली। न्यूयार्क में किराया बहुत अधिक था। इस प्रयोगशाला का निर्माण उसने अपने ही ढंग से कराया था। कुछ ही वर्षों में यह प्रयोगशाला विश्वप्रसिद्ध हो गयी। इस प्रयोगशाला में सर्वप्रथम उसने 'माइक्रोफोन' का आविष्कार किया। इधर बेल ने टेलीफोन की खोज कर ही ली थी, परन्तु उसमें असुविधा यह थी कि बोलने व सुनने का साधन एक ही था। एडीसन ने दो वर्ष कठोर परिश्रम करके इसमें संशोधन किये। यह पेटेन्ट वेस्टर्न यूनियन कम्पनी ने एक लाख डालर में खरीद लिया।

सबसे अधिक ख्याति फोनोग्राफ से मिली

विश्व में सबसे अधिक ख्याति एडीसन को १८७८ में फोनोग्राफ से मिली। यह उस समय की कल्पना से परे की बात थी। यहां तक कि उसकी प्रयोगशाला के कर्मचारी भी स्तब्ध रह गये। पहले तो कल-पुर्जों को जोड़कर मशीन का रूप देने वाला उसका मिस्त्री ही चक्कर में पड़ गया। न तार है, न चुम्बक और न क्वायल? इसमें तो कुछ तत्व नहीं दीखता। और जब मशीन बनकर तैयार हुई और उसमें से एडीसन के स्वर में 'मेरी हेड ए लिटिल लेम्प'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

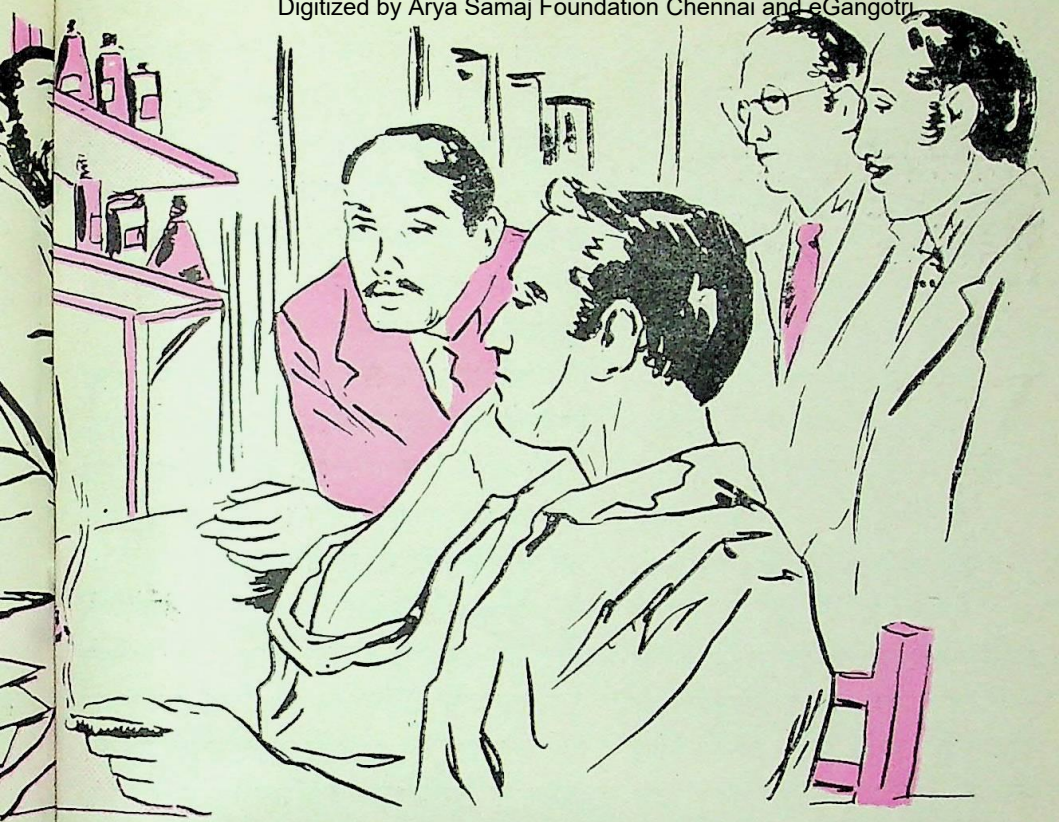

तार ४लता रहा···लेकिन यह उत्कर्ष नहीं था, यह महज शुरुआत थी——शुरुआत वह जो कभी खत्म नहीं होती

गाने की पंक्तियां गूंजीं, तो सहकारी पसीना-पसीना हो गये। कइयों ने सीने पर क्रॉस का चिह्न बनाया। उस समय एडीसन की आयु केवल ३१ वर्ष की थी, परन्तु वह मेलनो पार्क का जादूगर कहलाने लगा था। उस जादू का भेद यह था कि वह जो भी समस्या लेता था, उसमें जी-जान से जुट जाता था। दिन रात, दो दिन, तीन दिन, सोने का नाम नहीं। जब तक समस्या हल नहीं हो जाती वह सोने नहीं जाता था। कार्य पूरा होने पर ही लम्बी तानकर सोता था।

बिजली के बल्ब के विकास की कहानी एडीसन के ही प्रयासों की कहानी है। एडीसन से पूर्व विद्युत लैम्प तो बन गये थे परन्तु वे जनसाधारण की पहुंच से बाहर थे। एडीसन ने प्लेटिनम के तन्तु बनाकर अनेक सफल प्रयोग किये। उसने स्वयं कांच फूंककर बल्ब बनाये। उसने निर्वात स्थापित कर दीप्ति तथा बल्ब की आयु बढ़ायी। परन्तु प्लेटिनम बहुत महंगा होता है। उसने अनेक सस्ती धातुओं से भी असफल प्रयोग किये। फिर उसने कार्बन तन्तु प्रयुक्त किया। सफलता मिली लेकिन ये अधिक उच्च वोल्टेज सहन नहीं कर पाते थे। केवल ४० घण्टे जलते थे। फिर उसने कार्बनीकृत गत्ता प्रयुक्त किया तो अवधि १७० घण्टे तक बढ़ी। फिर उसका ध्यान बांस की ओर गया और उसने ६००० बांस की किस्मों के कार्बनीकृत रेशे बनाकर प्रयोग किये। उनमें से एक ने आशातीत सफलता प्राप्त की। वह दस साल तक प्रयुक्त हुआ। उसके बाद अब तक टंगस्टन तन्तु ही प्रयुक्त हो रहा है।

इसके साथ-साथ उसने घरेलू मीटर, स्विच, सुरक्षात्मक फ्यूज, मोटर जेनरेटर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मल्टिपल सर्किट आदि अनेक विद्युत सम्बधी नये उपकरण तैयार कर लिये थे।

एडीसन जनता को विद्युत सुलभ कराने के लिए कटिबद्ध था, परन्तु पग-पग पर समाचारपत्र व वहां की प्रसिद्ध गैस कम्पनी उसका विरोध करती थी। जब उसने भूमिगत तार ले जाने की बात की तो बड़ा हल्ला मचा। उसकी योजना को नागरिकों की विद्युत द्वारा हत्या की योजना की संज्ञा दी गयी। परन्तु वह शान्त रूप से अपना कार्य करता रहा। उस जमाने में बिजली का काम करने वाले प्रशिक्षित व्यक्तियों का प्राप्त होना असम्भव था, अतः बिजली के काम की शिक्षा देने के लिए एडीसन ने एक स्कूल खोला, जिसमें उसके सहकारी अध्यापन का कार्य करते थे। विषय को ठीक प्रकार से समझाने के लिए उसे एक पाठ्य पुस्तक भी लिखनी पड़ी। अन्त में वह सफल हुआ। ४ सितम्बर १८८२ को उसने न्यूयार्क नगर को विद्युत प्रकाश से जगमगा दिया। कुछ दिनों बाद उसने मेलनो पार्क में विद्युत रेल भी चला दी। उसने विद्युत की अनेक मशीनें (सिलाई, कपास काटने, बरफ हटाने आदि के लिए) बनायीं। लिफ्ट के सम्बन्ध में भी उसने अनेक प्रयोग किये।

१८८७ में उसकी पत्नी का स्वर्गवास हो गया। १८८६ में उसने दूसरा विवाह जीना मिलर से कर लिया। उससे प्रणय-निवेदन तार भेजने की 'मोर्स' डमी पर किया गया था। मिलर भी तार की भाषा जानती थी तथा नाटक या अन्य सामाजिक उत्सवों में वह अंगुलियों द्वारा इसी भाषा में ठक-ठक करके एडीसन को भाव समझा देती थी।

एडीसन ने ईथरीय बल पर भी कुछ योग किये थे और अपनी खोज का विवरण 'मारकोनी' को दे दिया था, जो इसके लिए आजीवन एडीसन का आभारी रहा।

वह चलचित्र निर्माता भी था

१८८७ में एडीसन का ध्यान कैमरे की ओर गया। कोडक कम्पनी के सहयोग से उसने एक सेकण्ड में २० से ४० तक चित्र लेने वाला कैमरा बनाया। १८८९ में उसने अपनी प्रयोगशाला में चलचित्र प्रदर्शित किया। उसने ब्रोक्सपार्क में एक लाख डालर की लागत से एक कांच का स्टूडियो भी बनाया तथा कई पूर्ण फिल्में निर्मित कीं। वह लेखक, निर्माता, निर्देशक तथा केमरामैन का कार्य स्वयं ही करता था। चलचित्र के पश्चात् उसका ध्यान एक्स-किरणों की ओर गया। उसने फ्लुओरोस्कोप तथा प्रतिदीप्तिशील विद्युत लैम्प बनाये।

वे सिगार कैसे थे ?

एडीसन में अपने कार्य में जुटे रहने की अभूतपूर्व क्षमता थी। दोनों पत्नियों से उसके छह बच्चे हुए। वे कितना भी शोर करते रहते, परन्तु एडीसन किसी न किसी वैज्ञानिक पत्रिका को पढ़ने में तल्लीन रहता। बचपन का 'बुद्धू' उद्घोषित एडीसन छह भाषाओं की वैज्ञानिक पत्रिकाएं पढ़ा करता था। कार्य में उसकी व्यस्तता निम्नलिखित घटना से स्पष्ट हो जायेगी : एडीसन की प्रयोगशाला के कुछ पुराने कर्मचारी उसके सिगार चुराकर पी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते थे। एक बार सिगार कम्पनी का प्रतिनिधि आया तो एडीसन ने उसे एक डिब्बा विशेष सिगार का बनवाकर लाने का आदेश दिया, जिसमें तम्बाकू के स्थान पर गोबर, लीद आदि भरा हो। कुछ दिनों बाद जब वह प्रतिनिधि फिर आया, तो एडीसन ने शिकायत की कि आपने वे सिगार नहीं भेजे? प्रतिनिधि ने उत्तर दिया कि मैंने तो आपके आर्डर के दूसरे ही दिन वे विशेष सिगार भिजवा दिये थे। अपने काम की धुन में एडीसन स्वयं ही वह सब सिगार पी गया था।

१९१४ में एडीसन की प्रयोगशाला में आग लग गयी। लगभग ५० लाख डालर की क्षति हुई। परन्तु एडीसन साहस छोड़ने वाला व्यक्ति नहीं था। अगली सुबह ही उसने पुनर्निर्माण का कार्य प्रारंभ कर दिया।

जब अमेरिका प्रथम विश्वयुद्ध में कूद पड़ा तब एडीसन की आयु ७० वर्ष की थी। उसे नौसेना सलाहकार बोर्ड के अध्यक्ष का पद दिया गया। इस पद पर रहते हुए उसने युद्ध में काम आने वाले ४० आविष्कार किये, जिनमें टारपीडो का पता लगाने का उपकरण व पनडुब्बियों के लिए सर्चलाइट अति महत्त्वपूर्ण हैं। ७५ वर्ष की आयु में भी वह १६ घण्टे प्रतिदिन कार्य करता था। ८० वर्ष की अवस्था में उसने सबसे पहला लांग लेइंग फोनोग्राफ रिकार्ड बनाया था।

चुटकुलों का शौकीन

इतना व्यस्त रहने पर भी एडीसन अतिप्रसन्नचित्त व्यक्ति था। वह बहरा तो था, परन्तु श्रवण यंत्र का उपयोग नहीं करता था। उसका कहना था कि उसी के कारण तो कारखाने के शोरगुल में उसका ध्यान नहीं बंटता। बहरापन उसके चिन्तन के लिए वरदान था। उसे चुटकुले इकट्ठे करने का भी शौक था। ५० वर्ष तक संसार के समस्त कोनों से, प्रसिद्ध व्यक्ति उसे श्रेष्ठ चुटकुले भेजते रहे। उसने इनकी बड़ी सी फाइल बना रखी थी। प्रतिदिन कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व वह नये आये चुटकुलों पर दृष्टि डालता था और कहकहा लगाकर हंसता था।

मृत्यु-शय्या पर वह डाक्टरों के लिए सिर दर्द था। वह अपने रोग के सम्बन्ध में जिज्ञासु रहता था तथा डाक्टरों से ऐसे प्रश्न करता था कि उन्हें उत्तर देना कठिन हो जाता था। वह दी जाने वाली औषधियों की वरीयता के सम्बन्ध में तर्क करता था तथा अपने रक्त-परीक्षण की स्लाइड माइक्रोस्कोप पर स्वयं देखना चाहता था।

१८ अक्तूबर १९३१ को ८४ वर्ष की अवस्था में उसका स्वर्गवास हुआ। अमेरिका के राष्ट्रपति की विशेष आज्ञा से उसकी शवयात्रा की रात्रि को पूरे एक मिनट तक सारे अमरीका में विद्युत बत्तियां बुझा दी गयीं। अमेरिका को सर्वप्रथम विद्युत प्रकाश से आलो-

२१ वर्ष की आयु में एडीसन ने अपना पहला आविष्कार पेटेण्ट कराया—(चित्र) युवा एडीसन अपनी प्रयोगशाला में

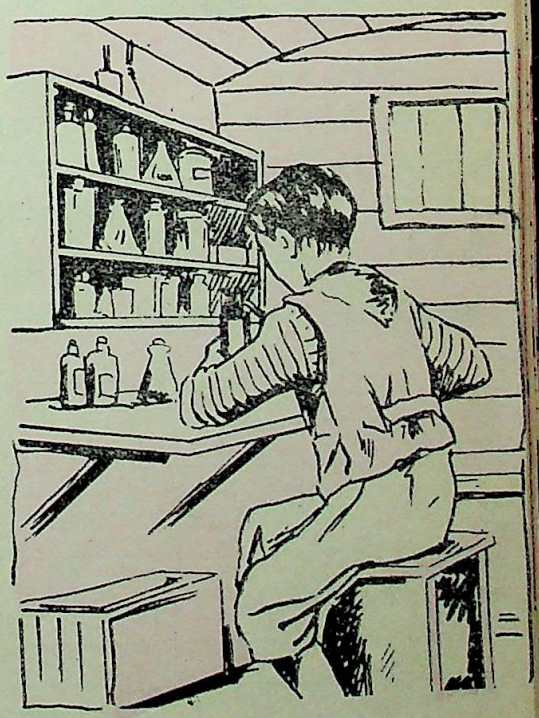

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कित करने वाले व्यक्ति की वह कितनी उपयुक्त श्रद्धांजली थी।

एडीसन की मृत्यु के बाद उसके एक पुराने साथी से किसी ने पूछा, "मृत्यु के बाद एडीसन की क्या प्रतिक्रिया थी?" साथी ने उत्तर दिया, "मुझे ठीक याद नहीं। परन्तु यदि उस लोक में कुछ भी सुविधा हुई, तो शीघ्र ही हमें उसका सन्देश मिलेगा।"

अन्तरिक्ष में सुरक्षा

अन्तरिक्षयात्रा के विकास के साथ-साथ अन्तरिक्ष स्टेशनों की उपयोगिता निश्चित रूप से बढ़ेगी। पृथ्वी की कक्षा में परिक्रमा करते हुए किसी भी अन्तरिक्ष स्टेशन से सहायता की पुकार कन्ट्रोल बोर्ड को मिलने पर सहायता शीघ्रतर पहुंचाना अब सम्भव हो सकेगा।

अमेरिकी अन्तरिक्ष उड्डयन संस्थान (नासा) ने एक रक्षक अन्तरिक्षयान का विकास किया है जो कन्ट्रोल बोर्ड तक पुकार पहुंचने के बाद मिनटों में ही संकटग्रस्त अन्तरिक्ष स्टेशन तक पहुंच जायेगा और वहां फंसे हुए कार्यकर्ताओं को रस्सी के सहारे खींचकर उन्हें सुरक्षित पृथ्वी पर ले आयेगा।

ह्यूस : फौलादी इरादों वाला व्यक्ति

एच. ह्यूस अमेरिका के जिस शानदार होटल के अन्तरंग कक्ष में व्यस्त था, वहां तक पहुंचना होटल के मालिक के लिए भी मना था। लेकिन होटल को बेचना तो था ही। कक्ष से बाहर झुंझलाये खड़े होटल मालिक के पास दरवाजे के नीचे से एक पर्चा आया। उठाया तो देखा, लिखा था : 'क्या कीमत ?'

पर्चे पर ही जवाब अन्दर गया : 'दस लाख डालर।' फिर एक और पर्चा आया : 'होटल खरीदा। आप जा सकते हैं।'

ऐसे हठी ह्यूस ने चैलेंज दिया : 'यदि मैं अपनी विशालकाय स्टीम बोट को उड़ाकर न दिखा सका तो अमेरिका की धरती से विदा ले लूंगा।' अन्ततः २०० टन वजनी स्टीम बोट को उसने २५ मीटर की ऊंचाई पर ३०० मीटर तक उड़ाकर अपनी बात सत्य सिद्ध कर दी।

पहली और अन्तिम बार उड़ी वह स्टीम बोट आज भी अमेरिका के संग्रहालय में देखी जा सकती है।

जल-स्रोत कहां है, कहां नहीं

भूमिगत जल-स्रोत को अधिक से अधिक सरल उपायों द्वारा खोजा जा सके, इस ओर भूगर्भ वैज्ञानिक अनवरत प्रयत्नशील हैं।

अब तक के सामान्य तरीकों में काफी गहरी खुदाई करनी पड़ती थी। अमेरिकी वैज्ञानिक फिलिप ब्रायन ने दो वर्ष तक अनेक प्रयोग करके निष्कर्ष निकाला है कि केवल दो मीटर गहरा पाइप भूमि में उतारकर वहां के ताप-अन्तर से जल-स्रोत ज्ञात किया जा सकेगा। जहां जल-स्रोत होगा, वहां का ताप चारों ओर के वातावरण से अवश्य भिन्न होगा। यही विधि यदि अवरक्त किरणों की सहायता से सम्पन्न की जा सकी तो प्रो. ब्रायन को आशा है कि उड़ते हुए वायुयान से ऐसे मरुस्थलीय क्षेत्रों में जल-स्रोत की खोज की जा सकेगी जहां पहुंचना आसान नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्माण्ड किरण

विमलेन्दु

सूर्य, चन्द्र और तारों से आने वाले प्रकाश से हम सभी परिचित हैं। यह वे प्रकाश-किरणें हैं जिनका हमारी आंखों पर सीधा प्रभाव पड़ता है और इसीलिए हमें इनका भान सहज ही हो जाता है। किन्तु विकिरण अन्य अनेक प्रकार के भी होते हैं, जिन्हें आंखों से नहीं, बल्कि विशेष प्रकार के यन्त्रों से पहचाना जा सकता है। रेडियो तरंगें रेडियोग्राही द्वारा पहचानी जाने वाली. और ऐक्स-किरणें विशेष प्रकार की फोटो फिल्मों द्वारा पहचानी जा सकने वाली इसी प्रकार की किरणें हैं।

ब्रह्माण्ड किरणें भी इसी प्रकार की ऐसी किरणें हैं जो अनन्त ब्रह्माण्ड में कहीं से आकर हमारी पृथ्वी पर अनवरत पड़ती रहती हैं; और विशेष यंत्रों द्वारा इनका ज्ञान होता है।

श्रेय विक्टर हैस को

ब्रह्माण्ड किरणों का सर्वप्रथम ज्ञान आस्ट्रिया के वैज्ञानिक विक्टर हैस ने १९१२ में प्राप्त किया। यह एक संयोग ही था। इसे हम इस तरह समझ सकते हैं। यदि हम एक स्वर्ण पत्र विद्युद्दर्शक लें और उसे आवेशित कर दें तो स्वर्ण पत्र आवेशित अवस्था में चित्र १ (अ) के समान फैले रहेंगे। यदि स्वर्ण पत्रों पर स्थित आवेश ऐसा ही बना रहे तो, वे सदैव फैले ही रहेंगे। निरावेशित हो जाने पर वे चित्र १ (ब) के समान गिरकर मिल जायेंगे। अब विक्टर हैस ने यह पाया कि आवेशित स्वर्ण पत्र रखे-रखे स्वयं ही लगभग दस दिनों में गिर गये। ऐसा क्यों? सहज अनुमान यही होगा कि हमारे वायुमण्डल में आयन सदा उपस्थित रहते हैं, और चित्र १ (स) में दिखाये प्रकार से वायुमण्डल के ऋणात्मक आयन (यदि स्वर्ण पत्रों पर आवेश धनात्मक है तो) स्वर्ण पत्रों की ओर आकृष्ट होकर उनके आवेश को धीरे-धीरे कम कर देंगे। यही कारण उनके गिर जाने का होगा। तो दूसरा प्रश्न है, ये आयन कहां से आये? सूर्य की पराकासनी किरणों से भी कुछ आयन बनते हैं, किन्तु अधिकतर तो वे पृथ्वी पर सर्वत्र पाये जाने वाले रेडियोधर्मी पदार्थों से निकले हुए

चित्र १—(अ) आवेशित स्वर्ण पत्र; (ब) निरावेशित स्वर्ण पत्र; (स) वातावरण के आयनों द्वारा निरावेशन की प्रक्रिया

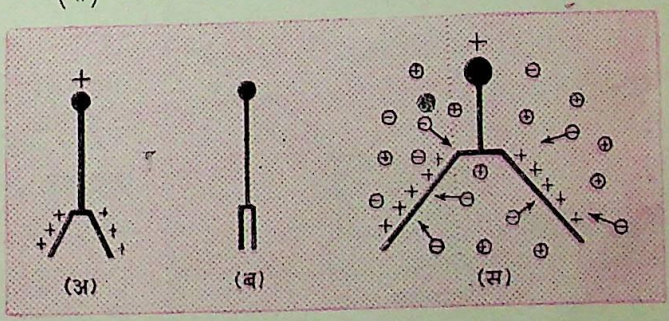

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized By Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

α β और γ किरणों से बनते हैं। अतः विल्सन हैस ने यह सोचा कि ये रेडियोधर्मी किरणें पृथ्वी के धरातल से निकलती हैं, और कुछेक मीटर ऊंचाई तक ही इनका प्रभाव रहता है, फिर ये समाप्त हो जाती हैं, अतः यदि हम स्वर्ण पत्र विद्युद्दर्शी को किसी गुब्बारे में रखकर ऊंचाई पर ले जायें तो स्वर्ण पत्रों में पाये जाने वाले स्व-निरावेशन में उत्तरोत्तर कमी होती जायेगी। ऐसा उन्होंने किया भी, किन्तु परिणाम उल्टा ही निकला, अर्थात् ऊंचाई पर जाने से स्व-निरावेशन की मात्रा में उत्तरोत्तर कमी के स्थान पर स्पष्ट वृद्धि ही हुई। और यहीं से एक नयी किरणों का सूत्रपात हुआ। निश्चय ही कोई आयन उत्पन्न करने वाली किरणें ऊपर से आ रही हैं। इनका नाम ब्रह्माण्ड किरण (Cosmic ray) रखा गया।

इस ऐतिहासिक उद्घाटन के पश्चात् विश्व के बहुत से वैज्ञानिक तरह-तरह के यंत्रों की सहायता से इन ब्रह्माण्ड-किरणों के विस्तृत अध्ययन में लग गये। पिछले ५० वर्षों के अनुसंधानों के फलस्वरूप जो जानकारी हमें आज मिली वह संक्षेप में निम्नलिखित है:

चित्र २: अपने मार्ग से मुड़ता हुआ कण

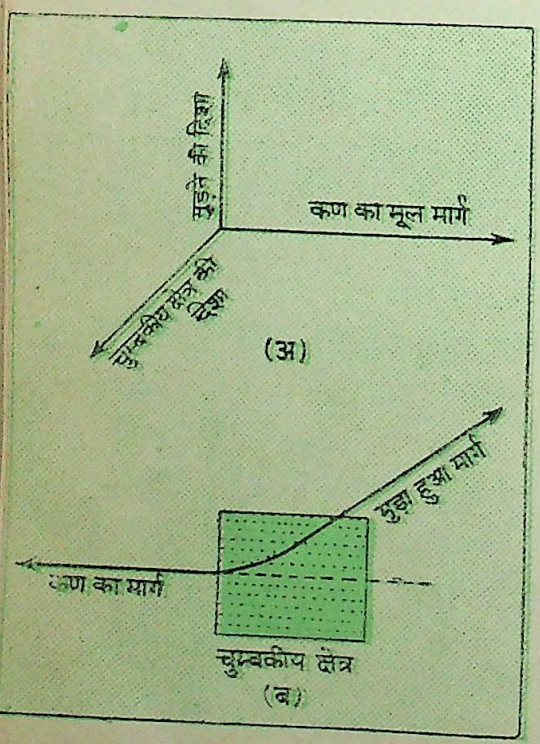

शताब्दियों के अन्तराल से विस्फोट

अनन्त ब्रह्माण्ड में लगभग शताब्दियों के अन्तराल से विशाल तारे या नीहारिकाओं में बड़े जोर के विस्फोट होते रहते हैं। ऐसे किसी एक विस्फोट के फलस्वरूप जब कोई आकाशीय पिण्ड फट पड़ता है तो उसके छोटे-बड़े खण्ड बड़े वेग से इधर-उधर भागते हैं। अब यह विस्फोट इतने अधिक जोर का होता है कि पिण्ड पिसकर छोटे-छोटे धूलिकणों में ही विभक्त नहीं होता, बल्कि उससे भी अधिक सूक्ष्म कण उसमें से बनते हैं। अभिप्राय यह है कि सभी पदार्थ परमाणुओं से निर्मित हैं, और परमाणु स्वयं केन्द्र में प्रोटॉन तथा न्यूट्रॉन तथा उसके गिर्द घूमते इलैक्ट्रॉनों से निर्मित है।

अब कल्पना कीजिए इस विस्फोट की तीव्रता की जिसमें पदार्थ टूटकर धूलिकणों तक ही नहीं पिसता, बल्कि नौबत यहां तक आती है कि अनगिनत परमाणु और परमाणुओं के भी खण्ड प्रोटॉन आदि बड़े वेग से निकलकर चारों ओर छिटकते हैं। ये वेग से भागते आयनीकृत परमाणु और प्रोटॉन आदि जिनमें धन विद्युन्मय आवेश होता है अनन्त ब्रह्माण्ड में चलते हुए बड़े विशाल आकाशीय पिण्डों के पास से होकर जब जाते हैं, तो उनके चुम्बकीय क्षेत्रों के प्रभाव के कारण इनमें और भी अधिक वेग तथा ऊर्जा आ जाती है। ये प्रायः प्रकाश के वेग, अर्थात् करीब तीन लाख किलोमीटर प्रति सेकण्ड के वेग से चलते हुए आकाश में छितरा जाते हैं।

ब्रह्माण्ड किरणें: प्रोटॉन तथा परमाणुओं की बौछार

इस प्रकार के अत्यन्त ऊर्जस्वित वे कण, जो हमारी पृथ्वी पर पहुंचते हैं, हमारे वायुमण्डल को केवल आयनीकृत ही नहीं करते,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनके द्वारा कि वे पहचाने जाते हैं, बल्कि और भी अनेक विलक्षण प्रक्रियाएं करते हैं।

जैसा कि अभी कहा जा चुका है, ये ब्रह्माण्ड किरणें वस्तुतः प्रोटॉन और परमाणुओं की बौछार ही होती हैं, जिनमें तीन विशेषताएं हैं : एक तो यह कि प्रत्येक कण अत्यन्त ऊर्जा सम्पन्न है। दूसरा यह कि अत्यन्त सूक्ष्म है, यानी इतना कि पदार्थ के जितने छोटे से छोटे आकार की हम कल्पना कर सकते हैं, उतना है। (संख्या निश्चित करने के लिए कह सकते हैं कि प्रत्येक कण का आकार लगभग एक सेण्टीमीटर का सौ खरववां भाग है)। और तीसरा यह कि प्रत्येक में विद्युत आवेश है। इन तीन विशेषताओं के कारण ब्रह्माण्ड किरणें जब हमारी पृथ्वी पर पड़ती हैं तो कई विलक्षण प्रक्रियाएं देखने में आती हैं। छोटे आकार और अधिक ऊर्जायुक्त होने के कारण इनमें बड़ी प्रखर भेदक शक्ति होती है। उसी प्रकार, जैसे कि समान वेग वाली किन्तु बड़ी और छोटी दो बन्दूकों की गोलियों में से छोटी गोली अधिक भेदक होती है।

तो ये किरणें जब हमारे वायुमण्डल में प्रवेश करती हैं, तो वायु के परमाणुओं से टकराकर न केवल उन्हें तोड़-फोड़ देती हैं, अपितु इनकी टकराहट इतनी प्रबल होती है कि इनकी ऊर्जा स्वयं अपने में से ही नये प्रकार के कणों को जन्म देती है। ये नवोदित पदार्थ कण विज्ञान-अनुसंधान में विलक्षण कण (Strange Particles) या मूलभूत कण (Elementary Particles) के नाम से विख्यात हैं, और आधुनिक गवेषणाओं के क्षेत्र में इनका अनुसंधान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वैद्युत आवेश के कारण ब्रह्माण्ड किरणें हमारी पृथ्वी के निकट आते-आते पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र से प्रभावित होकर अपने मार्ग से मुड़ जाती हैं।

ब्रह्माण्ड किरणों के इन प्रभावों की हम

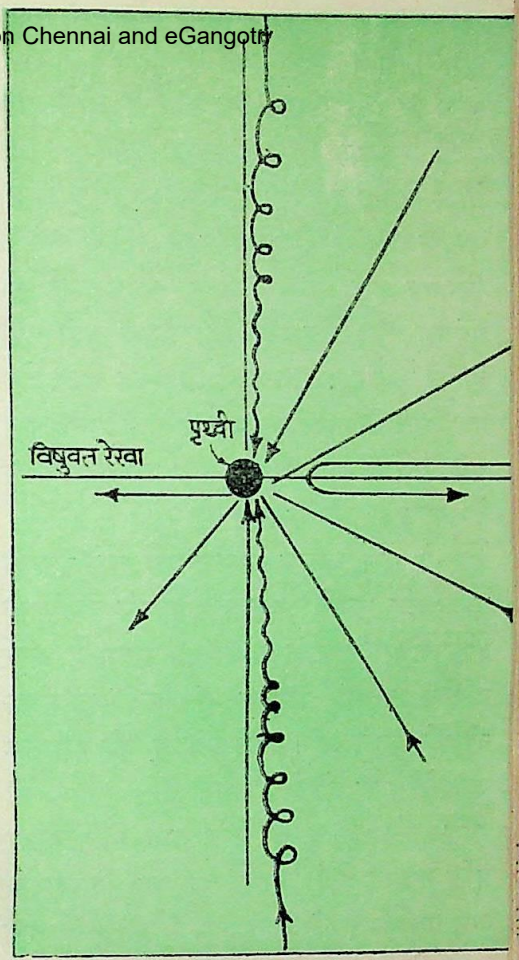

चित्र ३—पृथ्वी के चुम्बकीयक्षेत्र के कारण पृथ्वी पर पूर्व की ओर से आने वाले ब्रह्माण्ड कणों के विचलित मार्ग

यहां विस्तृत चर्चा करेंगे। पहली बात तो गतिशील विद्युन्मय कणों पर चुम्बकीय क्षेत्र के प्रभाव के संबंध में है। भौतिक विज्ञान का यह एक नियम है कि यदि किसी गतिमान विद्युन्मय कण पर चुम्बकीय क्षेत्र आरोपित किया जाय तो वह कण चित्र २ में दिखाये प्रकार से अपने मार्ग से मुड़ जाता है।

अपने मार्ग से मुड़ती ब्रह्माण्ड किरणें

इस सिद्धान्त के आधार पर हम समझ सकते हैं कि पृथ्वी के निकट आने वाली ब्रह्माण्ड-किरणें पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र के कारण अपने मार्ग से मुड़ जायेंगी और उनके मार्ग चित्र ३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में दिखाये प्रकार के हो जायेंगे। चित्र में केवल पूर्व से आने वाले कणों का ही मार्ग दिखाया गया है। इसी प्रकार पश्चिम से आने वाले कणों के मार्ग भी दिखाये जा सकते हैं। इसे देखने से स्पष्ट हो जायगा कि पृथ्वी के ध्रुवों पर लगभग सभी कण पहुंच सकेंगे जबकि विषुवत रेखा पर उनमें से केवल थोड़े ही पहुंचेंगे। यह बात प्रयोगों द्वारा सच पायी गयी है। ध्रुवों पर पहुंचने वाले प्रति वर्ग मीटर क्षेत्र पर प्रति सेकण्ड लगभग ४००० कण पाये गये हैं जबकि विषुवत रेखा पर यह संख्या केवल ३०० के लगभग है।

ये कण अनन्त आक्रमण में बड़ी लम्बी यात्रा तय करके आते हैं। प्रकाश तो किसी आकाशीय पिण्ड से सीधा ही आता है, और दूरियां इतनी अधिक हैं कि एण्ड्रोमीडा नीहारिका से आने वाले प्रकाश को हम तक पहुंचने में लाखों वर्ष लगते हैं। प्रकाश की गति सबसे अधिक, अर्थात् ३ लाख किलोमीटर प्रति सेकण्ड है! फिर ब्रह्माण्ड किरण के कण प्रकाश-वेग से आते हुए भी सीधे तो नहीं आते, वे तो मार्ग में आकाशीय चुम्बकीय क्षेत्र में उलझकर वहीं घूमते हुए न जाने कितने वर्ष बिताकर तब आ पाते हैं। इसी कारण इन किरणों का एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन यह है कि हमें अत्यन्त दूर के आकाशीय पिण्डों का ज्ञान होता है जिनके कि ये खण्ड हैं, तथा आकाश में स्थित चुम्बकीय क्षेत्रों की कुछ सूचना भी हमें इनके द्वारा मिलती है।

पृथ्वी के वायुमण्डल में आने पर वायु तथा वायुमण्डल में पदार्थ के अन्य सूक्ष्म परमाणुओं से टकराकर ये किरणें जो विलक्षण प्रक्रियाएं करती हैं उनके अध्ययन ने आज के भौतिक विज्ञान को नये सिद्धान्त और नये आयाम दिये हैं। सबसे सरल प्रक्रिया तो यह है कि टकराने से परमाणु स्वयं टूट-फूटकर अपने अवयव—प्रोटॉन और न्यूट्रॉन—में खण्डित हो जाते हैं (चित्र ४)।

नये कणों का जन्म

ये कण अपने मार्ग में लगातार चलते हुए आयनीकरण की क्रिया करते चलते हैं। दोनों ही प्रकारों में वायुमण्डल में विद्युन्मय कणों—आयनों—की संख्या बढ़ जाती है। लेकिन केवल इतना ही नहीं, ब्रह्माण्ड किरण कणों की ऊर्जा तो बहुत ही अधिक होती है, सो वे टकराकर ऐसी क्रियाएं भी करते हैं जिनसे उनकी ऊर्जा स्वयं नये द्रव्य कणों में बदल जाती है। नये—अब तक अज्ञात—कणों का जन्म होता है। ये कण मीजॉन और हाइपरॉन के नामों से जाने जाते हैं। ऐसे

चित्र ४ : टकराने से परमाणु टूटकर अपने अवयव में खंडित हो जाते हैं

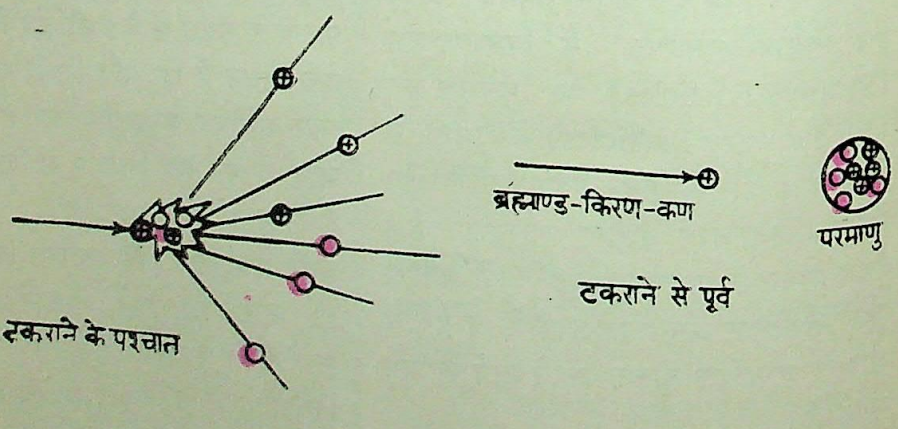

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत से मीजानों तथा हायपरानों का अब तक पता चल चुका है। इन द्रव्यकणों में अधिकांश अत्यन्त अल्पजीवी होते हैं और एक सेकण्ड के एक लाखवें अथवा इससे भी कम काल तक जीवति रहकर ये कण दो-तीन अन्य कणों में विसर्जित होकर लुप्त हो जाते हैं।

विसर्जन से प्राप्त कण स्वयं भी अल्पजीवी होते हैं जो पुनः अन्य, स्थायी रूप से जीवित रहने वाले, सूक्ष्म द्रव्य कणों में विसर्जित होकर लुप्त हो जाते हैं। इस क्रिया के क्रमपूर्वक होते रहने के फलस्वरूप अन्त में जो कण बच रहते हैं वे फोटान, पाजीट्रान, इलेक्ट्रान न्यूट्रिनो तथा विद्युतहीन म्यू-मीजान ही होते हैं। न्यूट्रान तथा विद्युतहीन म्यू-मीजान ऐसे कम हैं जो किसी पदार्थ से भी अवरोधित नहीं होते और इसीलिए वायुमण्डल या पृथ्वी की तहों का भी भेदन करते हुए अवाध गति से चले जाते हैं। इलेक्ट्रान, पोजीट्रान तथा फोटान एक मजेदार खेल खेलते हैं: इलेक्ट्रान तथा पाजीट्रान वास्तव में एक ही प्रकार के कण हैं अन्तर केवल इतना है कि ऋण विद्युन्मय होने पर इसे इलेक्ट्रान तथा धन विद्युन्मय होने पर इसे पाजीट्रान कहते हैं। उर्जस्वित फोटान

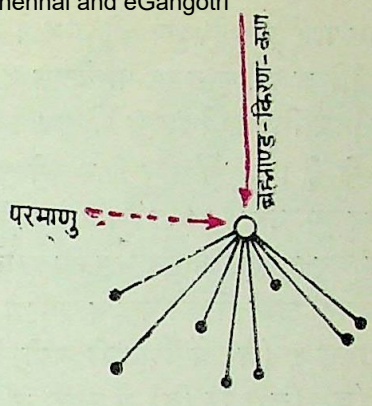

चित्र ५ (अ)

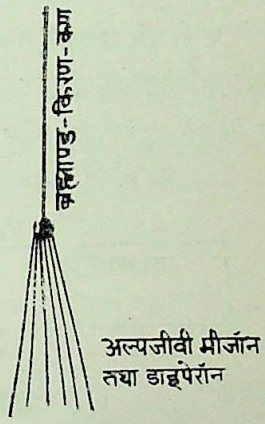

चित्र ५ (ब)

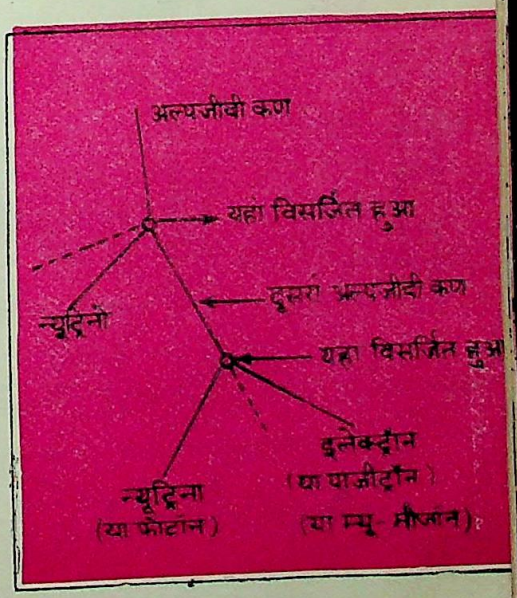

चित्र ५ (स)

चित्र ५ (अ) : प्रक्रिया १—ब्रह्माण्ड किरण कण परमाणु का भंजन करके प्रोटॉन तथा न्यूट्रॉन की बौछार बनाता है

चित्र ५ (ब) : प्रक्रिया २ (क)—भंजन की दूसरी क्रिया में अल्पजीवी कण मीजॉन तथा हाइपेरॉन की उत्पत्ति होती है

चित्र ५ (स) : प्रक्रिया २ (ख)—प्रक्रिया २(क) में उत्पन्न अल्पजीवी कण क्रमशः विसर्जित होते हुए अन्ततः फोटॉन, इलेक्ट्रॉन, पाजीट्रॉन, न्यूट्रिनों या म्यू मीजॉन छोड़ जाते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में विशेषता है कि यह अपनी ऊर्जा से एक इलेक्ट्रान-पाजीट्रान के युग्म को जन्म दे देता है। ऊर्जस्वित इलेक्ट्रान या पाजीट्रान पदार्थ से टकराकर फिर प्रत्येक एक फोटान उत्पन्न कर सकते हैं। यह फोटान फिर इलेक्ट्रान-पोजीट्रान युग्म उत्पन्न करता है। और यह खेल तब तक चलता रहता है जब तक कि इनमें से प्रत्येक अपनी ऊर्जा खोकर थक न जाय। यह प्रक्रिया चित्र ५ (अ) में दिखायी गयी है। चित्र ५ (ब), (स) और (द) में ऊपर वर्णित पहली दो प्रक्रियाएं भी दिखायी गयी हैं।

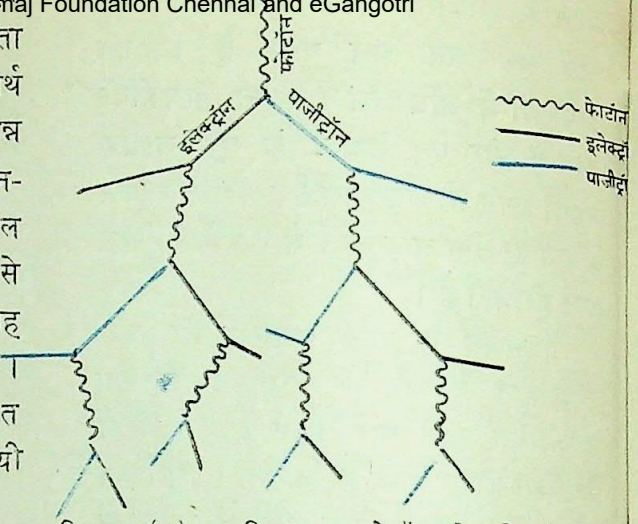

चित्र ५ (द) : प्रक्रिया ३—फोटॉन से इलेक्ट्रॉन-पाजीट्रॉन की बौछार का निर्माण

नवजात कण से कणों की बौछार तक

इन सभी प्रक्रियाओं का फल यह होता है कि ब्रह्माण्ड किरण का एक कण पृथ्वी के वायुमण्डल में प्रवेश करते ही टकराकर अनेक और भिन्न प्रकार के कणों को बनाता है। ये नवजात कण फिर अपनी विशेषताओं के अनुरूप अनेक कणों को—वस्तुतः कणों की बौछारों को—बनाते चलते हैं, और होता यह है कि वायुमण्डल में प्रवेश करने वाले एक कण के बदले पृथ्वी के तल पर पहुंचते-पहुंचते कणों की एक बड़ी भारी बौछार बनकर तैयार हो जाती है।

यह हुई ब्रह्माण्ड किरणों के जन्म से लेकर पृथ्वी-तल तक पहुंचने की कहानी। अब अन्त में अपने विचारों को स्थिर करने के लिए इस पूरी कहानी को संक्षेप में दुहरा लें। साथ की तालिका में यही प्रस्तुत है।

ब्रह्माण्ड किरणों की कहानी : जन्म से लेकर पृथ्वी-तल तक पहुंचने की प्रक्रिया

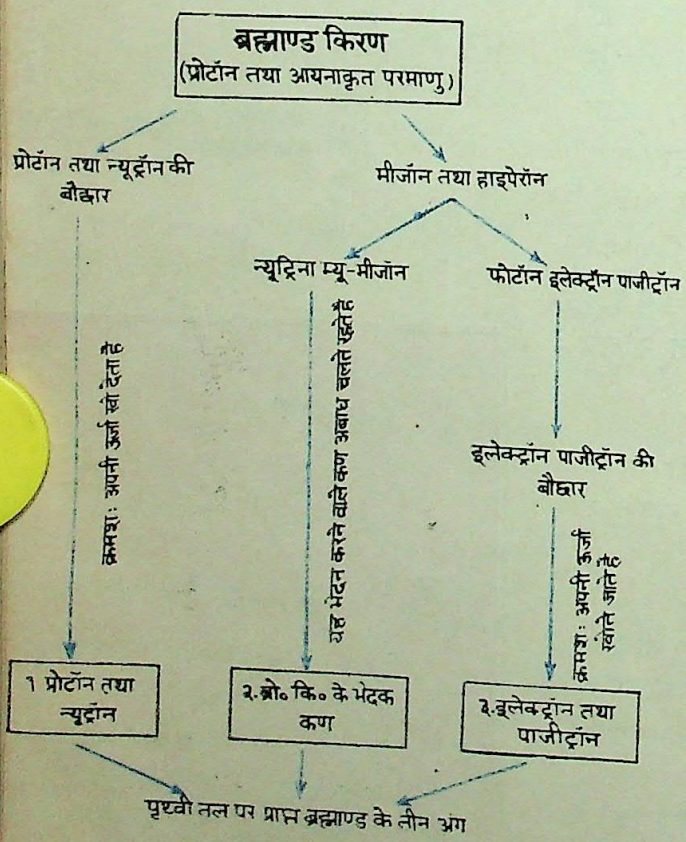

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जड़ जो बन गयी चीनी

देवेन मेवाड़ी

मानव को मिठास तो न जाने कितनी सदियों पूर्व घास चबाते-चबाते मिल गयी थी, परन्तु किसी विशेष मीठी जड़ से वह सदियों तक परिचित न हो सका। प्रकृति ने मीठी जड़ों को जंगली ही बनाये रखा। जानकार लोगों का कहना है कि ईसा से लगभग ३०० वर्ष पूर्व मिस्र के भव्य पिरामिडों को बनाने के दौरान पसीना बहाते हुए मजदूरों ने मीठी जड़ों को चूसा था। वे जड़ें जंगली चुकन्दर थीं। चुकन्दर तब एशिया और मिस्र में जंगली अवस्था में पाया जाता था। आधुनिक लेखक भले ही चुकन्दर से विशेष परिचित न हों, परन्तु यूनानी चिकित्सक हिप्पोक्रेट्स ने इसे अच्छी खासी औषधि बताया था और कहा था कि शराब में चुकन्दर की पत्तियां डुबाकर घावों पर रखें तो घाव जल्दी भर जाते हैं। पुर्तगाली कवि गिल विसेंट ने १५०० में चुकन्दर पर एक कविता लिखी थी, जिसमें उसने बताया था कि चुकन्दर में जितनी ही अधिक मिठास होगी उसे खाने पर उतना ही तेज दिमाग होगा।

चुकन्दर की चीनी : चर्चाविहीन रही

१७४७ की बात है। जर्मन रसायनविद् एन्ड्रियाज मार्गराफ ने बड़ी जटिल विधि से अपनी प्रयोगशाला में चुकन्दर की चीनी बनायी थी, परन्तु उसकी कहीं चर्चा न हुई। चालीस वर्ष बीत गये, तब कहीं उसके शिष्य फ्रान्ज कार्ल एकार्ड ने बड़े पैमाने पर चुकन्दर से चीनी बनाने की सम्भावनाओं को सिद्ध किया। लोग फिर भी मौन साधे रहे, लेकिन सम्राट फ्रेडरिक विलियम द्वितीय ने एकार्ड की सुन ली और अपनी ओर से आर्थिक सहायता देकर सिलीसिया में चुकन्दर से चीनी बनाने की पहली फैक्ट्री खुलवाने में सहयोग दिया। तभी फ्रांसीसियों का ध्यान भी इस ओर गया, परन्तु सफलता हाथ नहीं लगी। युद्ध के कारण जब चीनी कम पड़ गयी और जीभ को मिठास महंगी पड़ने लगी, तो डियोक्स नामक वैज्ञानिक ने अपने देश के लिए बिलकुल गन्ने जैसी चीनी चुकन्दर से बना ली। १८११ तक बैंजामिन डीलेसर्ट ने पर्याप्त मात्रा में चुकन्दर से चीनी बना ली। यह बात नेपोलियन के एक मंत्री के कानों तक पहुंची और तत्पश्चात नेपोलियन के कानों तक। आनन्द विभोर नेपोलियन बोला, "हमें देखना चाहिए, फौरन चलो।"

और वहां नेपोलियन ने डीलेसर्ट को बुलाकर अपना 'क्रास आव आनर' उतारकर डीलेसर्ट की छाती पर टांक दिया। सैनिकों के लिए शक्ति हेतु चीनी मिल गयी थी। १८ मार्च १८९९ को नेपोलियन ने अपने मंत्री को आदेश दिया कि चुकन्दर से चीनी बनाने के प्रयत्नों को प्रोत्साहन दिया जाये और साथ ही अनुरोध किया कि फ्रांसीसी किसानों से कहो कि चुकन्दर उगाने से भूमि की उर्वरता बढ़ जाती है। जड़ के अति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

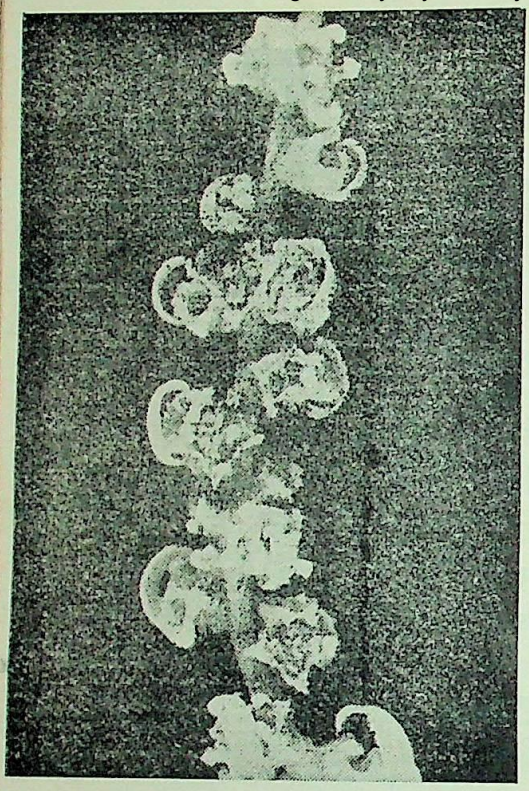

चुकन्दर के बीज का उत्पादन अब भारत में ही सम्भव हो गया है

रिक्त इसका शेष भाग मवेशियों के लिए भी उत्तम पौष्टिक खाद्य है। सप्ताह भर बाद ही उसने ७९,००० एकड़ भूमि में चुकन्दर की खेती व किसानों की जानकारी के लिए छह प्रायोगिक केन्द्रों की स्थापना के आदेश दे दिये। इस कार्यक्रम के लिए १० लाख फ्रैंक खर्च किये गये। राजनीतिक कार्टूनकारों ने नेपोलियन की इस सनक के कार्टून बना डाले। कहीं नेपोलियन अपने काफी के कप में चुकन्दर की जड़ निचोड़ते हुए तो कहीं शाहजादी को चुकन्दर की जड़ चुसाते हुए या आया यह बताते हुए कि चूसो प्यारे चूसो, तुम्हारे पिताजी का कहना है कि चीनी है।

चुकन्दर की बन आयी

और नेपोलियन की बदौलत ही चुकन्दर की बन आयी। दुर्भाग्य से १८ जून १८१५ को वाटरलू में इस महान सेनानायक के साथ ही चुकन्दर का उद्योग भी ढह पड़ा।

तत्पश्चात वैज्ञानिकगण चुकन्दर के पीछे पड़ गये। इस प्रकृति प्रदत्त मिठास के स्रोत को वे सुधारते रहे। विभिन्न जातियों के परस्पर संकरण द्वारा उनकी संततियों में शर्करा की मात्रा बढ़ाते रहे। वेस्ट इण्डीज से आयात की हुई गन्ने की चीनी चुकन्दर से चीनी

विश्व में चुकन्दर की उपज

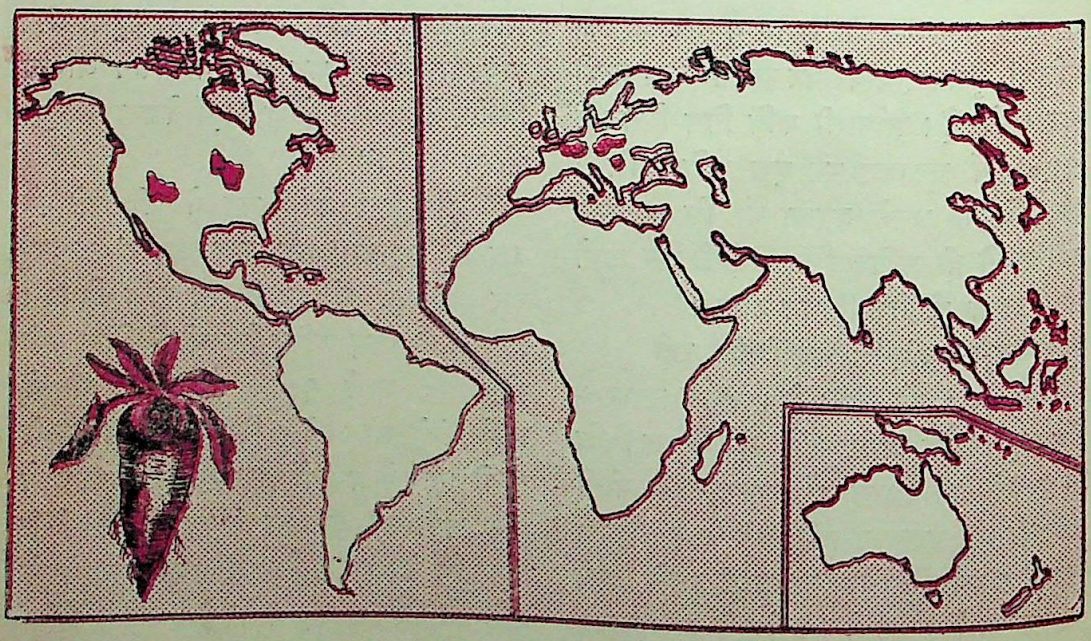

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

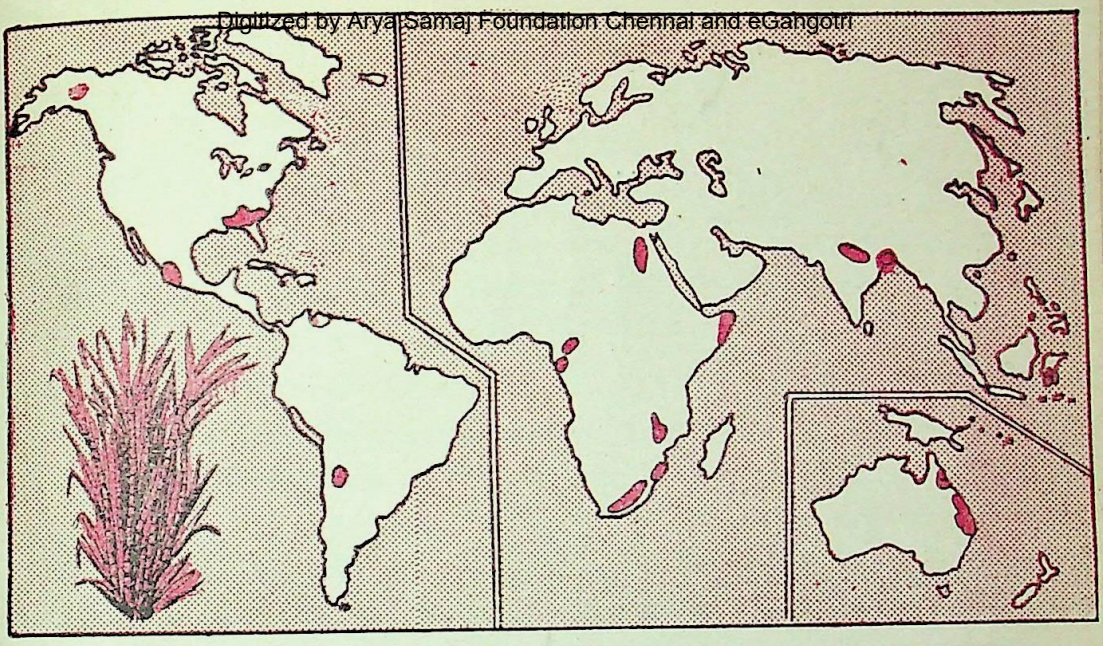

विश्व में गन्ने की उपज

बनाने वालों के सपने चूर-चूर कर रही थी, तभी वेस्ट इण्डीज में गुलामों का उद्धार हो गया और इससे यूरोप में चुकन्दर का भी उद्धार हो गया। गुलामों की मुक्ति से गन्ने की खेती पर भारी असर पड़ा और यूरोप चुकन्दर की चीनी बनाने में फिर से जुट गया।

शर्करा से ही शक्ति

मुंह मीठा करने का मुहावरा भी कितना सटीक है। मिठास से ही शक्ति मिलती है। आपका मुंह मीठा करने का अर्थ हुआ आपको अतिरिक्त शक्ति मिले। वास्तव में होता यह है कि भोजन के एक मीठे कौर से उसकी चीनी पाचन क्रिया के दौरान ग्लूकोज तथा सूक्रोज नामक दो शरीर के काम आने वाली शर्कराओं में बदल दी जाती है। ये शर्कराएं रक्त में मिल जाती हैं और आपके शरीर के हर अंग में पहुंचकर शक्ति देती हैं। शेष बचने वाली चीनी जिगर तथा मांसपेशियों में 'ग्लाइकोजन' के रूप में जमा कर ली जाती है

चुकन्दर : एक मन्त्री फ्रांस में बनी चुकन्दर की चीनी नेपोलियन भेंट करते हुए (एक प्राचीन कलाकृति की फोटोनुकृति)

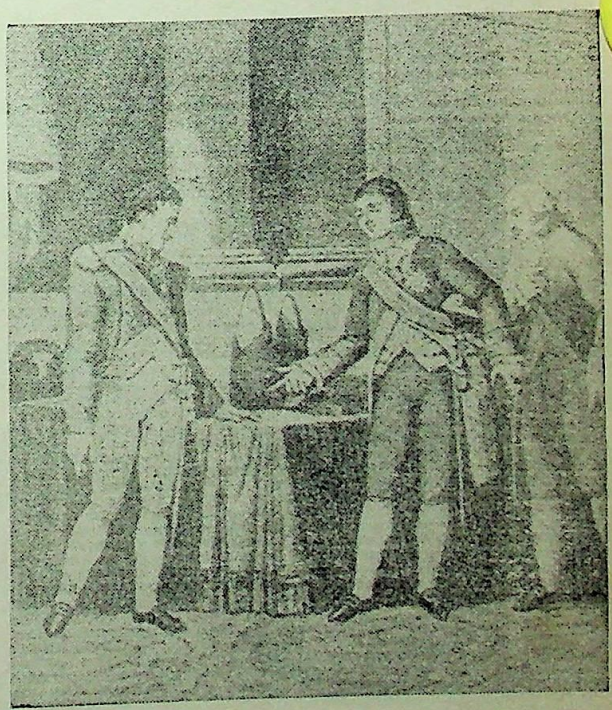

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेपोलियन के लिए चुकन्दर के सामने 'क्रॉस ऑव आनर' भी तुच्छ था क्योंकि वह अपने सैनिकों के लिए चीनी चाहता था'''क्या उसे चीनी मिली ?

और जब आपको अत्यधिक शारीरिक श्रम करना पड़ता है, तो यही चीनी शक्ति देती है। चैम्पियन खिलाड़ी इसीलिए प्रतियोगिता से पूर्व मीठा नाश्ता करते हैं।

आज तो चुकन्दर विश्व के हर देश में अपनी जड़ें जमा चुका है। विश्व में ४८ प्रतिशत चीनी आज चुकन्दर से बनायी जा रही है। भारत में भी इसके पैर पड़ चुके हैं। वैज्ञानिकगण इसकी भारतीय दशाओं के लिए अनुकूल किस्में तैयार कर रहे हैं।

मिठास की तलाश में

उ. प्र. कृषि विश्वविद्यालय में चुकन्दर विशेषज्ञ डा. प्रेमस्वरूप भटनागर एक वर्ष तक सं. रा. अमेरिका तथा यूरोप में चुकन्दर के प्रजनन पर विशेष अध्ययन करके लौटे हैं। भारत में इस नयी फसल को बढ़ावा देने के लिए वे कटिबद्ध हैं। उनका कहना है कि आरम्भ में चुकन्दर की जिन जंगली जड़ों से पहली बार चीनी अलग की गयी थी, उनमें केवल २ से ४ प्रतिशत ही शर्करा थी, परन्तु प्रजननकर्ताओं ने अथक परिश्रम से आज चुकन्दर की जड़ों में १९ से २० प्रतिशत तक मिठास भर दी है। चुकन्दर की लगभग दो पौण्ड भारी जड़ से करीब १४ चम्मच बढ़िया, सफेद, दानेदार चीनी प्राप्त हो जाती है।

उत्तर प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय ने देश में पहली बार चीनी के लिए चुकन्दर की खेती की भारी संभावनाओं का पता लगाकर अनुसंधान कार्य प्रारम्भ किया है। डा. भटनागर का कथन है कि अभी भारत के लिए यह एक नयी-नवेली फसल है। सं. रा. अमेरिका, स्वीडन, डेनमार्क, इंग्लैण्ड आदि देशों के वैज्ञानिक भी भारतीय चुकन्दर कार्यक्रम में भरपूर सहयोग दे रहे हैं। उत्तरी भारत में इसकी दो फसलें उगायी जा सकती हैं—सर्दियों के दौरान मैदानों में और गरमियों में पहाड़ों में। फाल्टन (महाराष्ट्र) में भी इसकी बहुत अच्छी उपज मिल रही है। गन्ने की तरह मासी फसल के विपरीत चुकन्दर खेत में सिर्फ ६-७ माह ही खड़ा रहता है, लेकिन इसके बाद भी प्रति हेक्टर लगभग ६,५०० किलोग्राम चीनी दे सकता है। बाकी महीनों में किसान मक्का, ज्वार, बाजरा उगा सकते हैं।

प्रजनन विज्ञानी चुकन्दर में ब्याह रचाते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष भर देश की चीनी मिलों को चालू रखा जा सकता है

उत्तरी भारत के मैदानी इलाकों में अक्तूबर में चुकन्दर की बोआई करके अप्रैल-जून में खुदाई की जा सकती है। और बढ़िया बात तो यह है कि खरीफ में गन्ना उगाकर रबी के मौसम में चुकन्दर उगाया जा सकता है। इस तरह वर्ष भर देश की चीनी मिलों को चालू रखा जा सकता है। चुकन्दर पाले से परास्त नहीं होता और क्षारीय व लवणीय भूमि में भी पनप सकता है। इस तरह उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा और राजस्थान की ऐसी ७० लाख एकड़ भूमि भी लवण व क्षारों के बदले चीनी उगल सकती है।

यह रहा चीनी का नया स्रोत

चुकन्दर:पशुओं के लिए एक पौष्टिक चारा भी

हमारे उपयोग के लिए चीनी देने के साथ ही पशुओं के लिए चुकन्दर पौष्टिक चारा भी देता है, जिसमें १० प्रतिशत प्रोटीन और ६० प्रतिशत पाचनशील पोषक तत्व होते हैं। प्रजनन का काम बड़ा पेचीदा है और इसके लिए बड़े कुशल हाथों की जरूरत होती है। रातें छोटी हों, दिन लम्बे और तापक्रम हो ३५° फा., तभी चुकन्दर के पौधों में फूल खिलते हैं। इसलिए बीज-उत्पादन बहुत जटिल होता है। चुकन्दर का बीज हमें बहुत ऊंचे दामों पर विदेशों से आयात करना पड़ता है। इस समस्या को हल करने के लिए उ. प्र. कृषि विश्वविद्यालय ने कुमायूं की २,५०० मीटर ऊंची पहाड़ियों में चुकन्दर के बीज उत्पादन में भी सफलता प्राप्त कर ली है। जहां गन्ना नहीं उग सकता वहां उत्तर भारत में चुकन्दर उगाया जा सकेगा।

श्रवण यन्त्र : एक आभूषण

अब तक श्रवण यन्त्र चश्मे के फ्रेम में फिट रहता था, परन्तु यह जरूरी तो नहीं कि सभी कम सुनने वाले व्यक्ति चश्मा लगाते ही हों। अतः श्रवण यन्त्र का प्रयोग करने के लिए व्यक्ति को आवश्यक रूप से चश्मा लगाना पड़ता था। लेकिन अब नये किस्म के श्रवण यन्त्र को महिलाओं के कर्णफूल में फिट कर दिया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

नेत्रहीनों के लिए वरदान : आप्टोफोन

ब्रिटेन के वैज्ञानिकों ने 'आप्टोफोन' नामक एक नया यन्त्र विकसित किया है। नेत्रहीनों का अब तक एकमात्र सहारा 'ब्रेल पद्धति' थी जिसकी सहायता से वे उभरे हुए अक्षरों पर अंगुली फिराकर शब्दज्ञान कर लेते थे। इस नये यन्त्र 'आप्टोफोन' द्वारा वे स्वर-लहरी सुनकर वही प्रयोजन सिद्ध कर सकेंगे। स्वरयुक्त प्रकाश-किरण फोटो इलेक्ट्रिक सेल की सहायता से जैसे-जैसे एक-एक अक्षर पर चलती जायेगी, भिन्न-भिन्न स्वर सुनायी पड़ेंगे। इन स्वरों से ही विभिन्न शब्दों का ज्ञान होता जायेगा।

भवन रेंगने लगा

स्विटजरलैण्ड का बेसेल नगर। नगर-पालिका को नयी नगर-योजना में आवश्यकता आ पड़ी कि राजमार्ग के एक भवन को लगभग ३० मीटर खिसकाया जाय। भवन को रहने वालों से खाली कराना, भवन गिराना तथा दूर हटकर नया भवन निर्मित करना, कुछ भी सम्भव नहीं था। इंजीनियरों ने रात-दिन सिर खपाया और अन्ततः विशाल भार उत्तोलकों तथा अन्य यन्त्रों की सहायता से मकान के निवासियों सहित आखिर दो मीटर प्रति घण्टे की रेंगती चाल से भवन को १२ घण्टे में खिसका ही लिया। भवन को गिराकर नया भवन बनाने में जो राशि खर्च होती उससे आधी राशि में ही काम बन गया।

यान्त्रिक परिचारिका

यन्त्र-सज्जा से सम्पन्न कृत्रिम यान्त्रिक मानव सामान्य मनुष्य की अपेक्षा कई गुना अधिक कार्य बिना थके और बिना गलतियों के कर लेता है। इस सफलता से प्रेरित होकर वैज्ञानिकों ने यान्त्रिक परिचारिका भी तैयार की है जो सम्पन्न गृहणियों के लिए अत्यन्त सहायक सिद्ध होगी। मनोहारी मुस्कान लिये, आकर्षक व्यक्तित्व और मिनी पोशाक में सज्जित यह यान्त्रिक परिचारिका आप जब भी, जिस काम के लिए स्विच दबायेंगे, काम पूरा कर लायेगी--चाहे वह घर की सफाई हो, ड्राइंगरूम की सजावट हो, खाना बनाना हो या लाण्ड्री मशीन में कपड़े धोना हो।

ध्वनि के रेखांकित चित्र : अपराधियों की तलाश

ध्वनि का अंकन किसी रिकार्ड अथवा टेप पर करने में अब नवीनता नहीं रही। अब ध्वनि के रेखांकित चित्र भी प्राप्त किये जा सकेंगे। जिस प्रकार किन्हीं भी दो व्यक्तियों के हस्त रेखांकन तथा अंगूठे के मुद्रांकन एक समान नहीं होते, उसी प्रकार शब्दोच्चारण भी एक समान नहीं हो सकते। इस तथ्य के आधार पर वैज्ञानिकों ने ध्वनि-रेखांकन की नयी विधियों का आविष्कार किया है जिनके द्वारा पराश्रव्य ध्वनियां भी अंकित की जा सकेंगी। अन्यानेक क्षेत्रों में उपयोगी ये विधियां अपराधी की तलाश करने में ठीक वैसी ही सहायक सिद्ध होंगी जैसी कि हस्तरेखा और अंगूठे की छाप।

दुर्घटना के समय

पश्चिम जरमनी की सीमेन्स कार्पोरेशन ने एक ऐसा उपकरण विकसित किया है जो दुर्घटना के समय व्यक्ति के हृदय की मालिश भी कर सकता है और उसे कृत्रिम श्वास लेने में भी सहायता देता है।

यह उपकरण आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाया जा सकता है। दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति को दुर्घटनास्थल से एम्बुलेन्स में अस्पताल ले जाते समय भी यह उपकरण एम्बुलेन्स में रखा जा सकता है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बृहस्पति की चट्टानी गुठली : एक अन्तर्मुखी नगर

सूर्यदेव पाण्डेय

ओबेरान से तीनों अन्तरिक्ष यात्री प्रोवर–२३५ में बैठकर अन्तरिक्ष की ओर बढ़े···हलकी हरी किरणें छोड़ता हुआ यान क्षण भर में अन्तरिक्ष में अदृश्य हो गया। प्रोवर ही अन्तरिक्षयात्रियों का संसार था, उनमें से एक थ्री पी. को छोड़कर बाकी तीनों हाइबरनेशन की-सी स्थिति में थे। थ्री पी. ईंधन, यात्रा का कोण चैक करने और अपने सौरमंडल से हटने की स्थिति से गुजरने के लिए सक्रिय था।

कुछ ही मिनटों में वह सौरमण्डल छूट गया। थ्री पी. ने एक क्षण के लिए अनन्त अन्तरिक्ष में आंखें घुमायीं। २८ प्रकाश वर्ष दूर की पृथ्वी दिखायी पड़ ही नहीं सकती थी। दूर, बहुत दूर उसके सूर्य को देख पाना भी सम्भव नहीं था। वह आकाश गंगा में एक किनारे की ओर था जिधर यान अपनी यात्रा के पांच वर्ष बिताकर झुकने वाला था।

थ्री पी. ने कम्प्यूटरों के क्रियाकलापों पर दृष्टि डाली। सब कुछ सही था। अन्तरिक्ष में आवाजें नहीं थीं। अन्तरिक्ष गति और निर्माण-विध्वंस से ओतप्रोत है। थ्री पी. ने पीछे घूमकर जगमगाते हुए पिण्डों, चमकदार सितारों को देखा। एक निर्दिष्ट पथ पर यान बढ़ रहा था। उसने अपने हाइबरनेटेड साथियों पर एक दृष्टि डाली फिर हाइड्रोजन-आक्सीजन-हीलियम ईंधन के टैंक का मीटर चैक किया। ओबेरान अभी एण्टी-सिलिकान ईंधन का प्रयोग गुरुत्वाकर्षण से मुक्ति के लिए नहीं कर पा रहा था। सीधे गुरुत्वाकर्षण से मुक्ति के बाद ही अनेक गुरुत्वाकर्षण बलों के बीच ही यह ईंधन सक्रिय हो पाता था। इसीलिए यान में हाइड्रोजन-आक्सीजन-हीलियम ईंधन भी रखना पड़ता था। किसी ग्रह पर उतरते समय, या उड़ते समय (सीधे गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव में) इसी ईंधन के इंजन फायर करने पड़ते थे। एण्टी-सिलिकान ईंधन इस समय मन्द-निष्क्रिय पड़ जाता था।

थ्री पी. भी हाइबरनेटेड हो गया। यान गतिशील रहा। दिशा नियन्त्रण और मार्ग संशोधन का काम कम्प्यूटरों के जिम्मे था। कम्प्यूटरों के जिम्मे यह भी था कि यदि यान में कोई खराबी आ जाय तो वे अन्तरिक्ष-यात्रियों को जगा दें।

लेकिन प्रोवर–२३५ में कोई खराबी नहीं आयी। पांच एण्टी-सिलीकान वर्ष के बाद कम्प्यूटरों ने अन्तरिक्षयात्रियों को जगाया। यात्री सक्रिय हुए। वह क्षण आ रहा था जब उन्हें पृथ्वी का सूर्य दिखायी पड़ता और फिर सूर्य के गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव में यान उधर आकर्षित हो जाता।

थ्री पी., टु पी., वन पी. और जीरो पी. यान की खिड़कियों से बाहर देख रहे थे··· और वह रहा एक चमकता सितारा···पृथ्वी का सूर्य।

थ्री पी. ने कम्प्यूटरों से सूचना प्राप्त की कि अब यान सूर्य की ओर झुक गया है।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चमकता हुआ [illegible] पट्टियां । वह सम्मोहन भी अनोखा था। लेकिन लाल, हरी, गुलाबी चट्टानों का आकर्षण महंगा पड़ा

थ्री पी., टु पी., वन पी. और जीरो पी. अपने-अपने काम में लग गये। उन्होंने दोनों तरह के ईंधन चैक किये, लाइफ सपोर्ट को जांचा···और कम्प्यूटरों को निर्देश दिया कि सौरमण्डल में प्रवेश के बाद उन्हें वे हाइबरनेशन से जगा दें।

वे चारों फिर हाइबरनेटेड हो गये।

प्रोबर–२३५ में निस्तब्धता थी और ऐसी ही निस्तब्धत आन्तरिक्ष में थी। हर ओर निर्माण और विध्वंस का मूक शोर था।

प्रोबर–२३५ के अन्दर कम्प्यूटरों की अनोखी दुनिया···हरी, लाल, पीली, नीली बत्तियों का अद्भुत संसार। बाहर अन्तरिक्ष में कोई नोवा है, कोई सुपर नोवा है···अभी-अभी एक पिण्ड निर्मित हुआ···यह ग्रह बनेगा··· ग्रह···जीवन के लिए उपयुक्त धरातल···और इस धरातल पर शायद कोई सभ्यता जन्म लेगी। यह सभ्यता विकास करेगी···प्रोबर–२३५ जैसे यान उसके पास होंगे···फिर अनन्त अन्तरिक्ष में वे लोग यात्राएं करेंगे। लेकिन निर्माण के बाद यह विध्वंस कैसा? क्या प्रकृति कुछ निर्मित करती है विध्वंस के लिए? फिर इस निर्माण की आवश्यकता क्या है?

शायद सभ्यताएं अनन्तकाल से जन्म लेती रही हैं···मरती रही हैं और प्रोबर–२३५ जैसे यानों का अस्तित्व भी रहा है···कम्प्यूटरों की रंग-बिरंगी बत्तियां भी रही हैं···जलती हुई, बुझती हुई।

पृथ्वी तारा ग्रह से २८ प्रकाश वर्ष दूर एक सौरमण्डल है। इसके एक ग्रह ओबेरान पर मानव सभ्यता पृथ्वी से करोड़ों वर्ष पुरानी है और उसी हिसाब से विकसित भी है।

पृथ्वी के वैज्ञानिकों को एक महत्वपूर्ण रेडियो संकेत कई वर्ष पूर्व प्राप्त हुआ था। यह रेडियो संकेत उसी आकाशगंगा के एक छोर से आ रहा था जिसमें पृथ्वी और उसका सौरमण्डल था। इस अद्भुत रेडियो संकेत को पृथ्वी के वैज्ञानिक समझ नहीं सके थे, फिर इसके गूढ़ अर्थ को जानने के लिए वे वर्षों तक प्रयत्नशील रहे थे। लेकिन निष्फलता ही उनके हाथ लगी थी। बाद में उन्होंने उस ओर से अपना ध्यान हटा लिया था।

लेकिन ओबेरान से पृथ्वी को लगातार संकेत भेजे जा रहे थे, और इस बात पर उन्हें आश्चर्य हो रहा था कि पृथ्वी वाले उन संकेतों को ग्रहण करके क्यों नहीं अपने संकेत भेजते।

ओबेरान से जो संकेत प्राप्त होते थे, वे विद्युत चुम्बकीय तरंगों के माध्यम से नहीं आते थे, बल्कि वे एण्टी-सिलिकान तरंगों के माध्यम से आते थे। ये तरंगें व्यवहार तो विद्युत चुम्बकीय तरंगों की भांति ही करती थीं, लेकिन इनकी गति प्रकाश की गति से चौगुनी थी।

ओबेरान के वैज्ञानिकों ने अनेक सौरमण्डलों की खोज की थी, और उन्होंने इसी प्रक्रिया में पृथ्वी के सौरमण्डल को ढूंढ़ निकाला था। उन्होंने एण्टी-सिलिकान तरंगों से पृथ्वी के लोगों से सम्पर्क भी स्थापित किया। उनका खयाल था कि इसी तरह का बेतार-सम्पर्क बना रहेगा, लेकिन जब पृथ्वी की ओर से रेडियो संकेत प्राप्त होना बन्द हो गया तो उन्होंने पृथ्वी की यात्रा की योजना बनायी। उनके शक्तिशाली अन्तरिक्षयान इसके लिए तैयार थे।

ओबेरान के वैज्ञानिकों ने अपनी शक्तिशाली एण्टी-सिलिकान दूरबीनों से ज्ञात किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था कि पृथ्वी सफेद बादलों से ढका हुआ गोला है। बादलों के बीच में कभी-कभी नीली पट्टियां-सी दिखायी पड़ जाती हैं। ये पट्टियां शायद पानी की हैं।

ओबेरान एक सर्वाधिक उन्नत ग्रह है। एण्टी-सिलिकान (जो वास्तव में पदार्थ की दृष्टि से विपरीत नहीं है, पदार्थ का प्रतिरोधी पदार्थ है) की खोज ने वहां की तकनीक में क्रान्ति ला दी। उनके लिए भी प्रकाश ही चरम वेग वाला था। उनके यहां भी विद्युत चुम्बकीय तरंगें असीम गति वाली मानी जाती थीं। लेकिन एण्टी-सिलिकान, जो मूलतः सिलिकान से ही बना था, अत्यधिक विस्फोटक, शक्तिशाली और रश्मि प्रवाहक था। इसकी रश्मियां प्रकाश की चौगुनी चाल से चलती थीं। पहले ओबेरान के अन्तरिक्षयान प्रकाश के वेग से चलते थे। प्रकाश का वेग प्राप्त करने के लिए मैटर और एण्टी मैटर का सिद्धान्त था। यानी दोनों के विस्फोट से फोटॉन कणों की उत्पत्ति।

लेकिन वैज्ञानिकों ने पदार्थ का प्रतिरोधी पदार्थ खोज निकाला और इस दृष्टि से उन्हें सिलिकान उपयुक्त लगा। अन्तरिक्षयानों में सिलिकान का प्रतिरोधी प्रयुक्त हुआ। यह थोड़े से सिलिकान से लगातार प्रतिक्रिया करके सिलिकेट-फोटान कणों का निर्माण करता रहा। अन्तरिक्षयान इन कणों के वेग के आधार पर प्रकाश के वेग का चौगुना वेग प्राप्त कर गया।

फोटॉन राकेटों के निर्माण के बाद ही अन्तरिक्षयान के लिए आक्सीजन, भोजन, पानी की समस्या समाप्त हो गयी थी, क्योंकि प्रकाश के वेग से चलने पर जब अन्तरिक्ष-यात्रियों की घड़ियां बन्द हो जाती हैं तो उनके शारीरिक संस्थान भी बन्द हो जाते हैं। उन्हें सक्रियता देने के लिए वेग कम करना पड़ता है। फिर थोड़ी-सी आक्सीजन चाहिए, थोड़ा भोजन और थोड़ा जल। जब अन्तरिक्ष में [illegible] यह आवश्यक है।

एण्टी-सिलिकान ने इस थोड़ी-सी मात्रा पर भी विजय प्राप्त कर ली। अन्तरिक्षयात्री एण्टी-सिलिकान बैटरियों द्वारा इस तरह की यात्राओं में आवश्यकता पड़ने पर सक्रिय होने लगे।

थ्री पी., टु पी., वन पी., जीरो पी. सतर्क बैठे हैं। २८ प्रकाश वर्ष यानी ७ एण्टी-सिलिकान वर्ष बीतने में कुछ ही घण्टों की देर है। उनका यान सौरमण्डल की ओर झुक गया है और वे सफेद-सफेद बादलों और नीली पट्टियों के बजाय बादलों के बीच से लाल, हरी, गुलाबी नारंगी पट्टियों को देख रहे हैं···तो नीली पट्टियां कहां गयीं।

शायद वे ही वे पट्टियां हों। उन्हें रंगीन पट्टियों वाले ग्रह पर ही तो उतरना है···

सुरंग के भीतर एक अन्तर्मुखी नगर की कल्पना उन्हें आश्चर्यजनक लगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंगीन पट्टियों वाला ग्रह—चाहे वे पट्टियां नीली हों या लाल, हरी, गुलाबी, नारंगी—रंगीन पट्टियों का सम्मोहन···।

यान के एण्टी-सिलिकान ईंधन को उन्होंने मन्द-निष्क्रिय होते हुए महसूस किया। हाइड्रोजन-आक्सीजन-हीलियम ईंधन का इंजन फायर कर दिया। ग्रह नजदीक था। बादलों का गोला और रंगीन पट्टियां।

यह एक अद्भुत क्षण था। यह वही पृथ्वी थी—एक दूरस्थ सौरमण्डल का अनोखा ग्रह जहां जीवन था—जिसकी खोज ओबेरान ने लगभग ५० वर्ष पूर्व की थी। और अब उसी पर उसके चार यात्री उतरने वाले थे।

प्रोबर–२३५ ग्रहकी परिक्रमा करने लगा। अन्तरिक्ष यात्रियों ने अपने कैमरे से ग्रह के कई चित्र लिये। तीसरी परिक्रमा के बाद इंजन को डिसेण्ट के लिए फायर किया गया। यह डिसेण्ट अपने ढंग का अनोखा था—एक अपरिचित सौरमण्डल के अपरिचित ग्रह पर उतरने का अनुभव।

बादलों को चीरता हुआ अन्तरिक्षयान उतरने लगा। चूंकि अन्तरिक्षयान की बाहरी परत एक सर्वथा नयी धातु की थी, इसलिए ग्रह के वायुमण्डल से स्पर्श होने पर यान न जला न तप्त हुआ। २७ मिनट और जब मानवों के बीच वे होंगे···और सम्भवतः अपरिचित कोलाहल उनका स्वागत करेगा।

···लेकिन यान नीचे उतरता गया और उन्होंने देखा, लाल, हरी, नारंगी, गुलाबी, चट्टानें ही चट्टानें···न कोई नगर न कोई सभ्यता का चिह्न।···और हर ओर बर्फ फैली है।

यान एक चौरस जगह में उतरा। अन्तरिक्ष यात्री करीब ३० मिनट के बाद बाहर आये। उन्हें सब कुछ वीरान मिला। उन्होंने सोचा, क्या युद्ध हुए हैं और सभ्यताएं नष्ट हो गयी हैं? मानव कहां गये?

वे चारों बर्फ पर स्केटिंग करने लगे। रंगीन चट्टानों पर जमी हुई बरफ की हलकी-सी चिकनी परत। लेकिन उन चारों में से एक थ्री पी. फिसलता हुआ एक अंधेरी सुरंग के मुंह तक चला गया। वह वहां कुछ देर खड़ा रहा फिर उसने अपने साथियों को आवाजें दीं।

उस के सभी साथी वहां पहुंच गये··· उन्होंने अंधेरी सुरंग के भीतर झांककर देखा···उधर शोर था, आवाजें आ रही थीं, जैसे सुरंग से बहुत अन्दर चले जाने पर शायद कोई नगर उन्हें मिल जायेगा।

लेकिन उन्होंने वहां अधिक देर ठहरना बेकार समझा। बरफ हटाकर उन्होंने आसपास की सारी मिट्टी इकट्ठी की और अपने अन्तरिक्ष-यान की ओर बढ़ आये। निरर्थक ही था यहां आना, लेकिन सुरंग के भीतर एक अन्तर्मुखी नगर की कल्पना उन्हें आश्चर्यजनक लगी।

अन्तरिक्ष यान में आकर उन्होंने यान का इंजिन फायर किया। वह थोड़ा उठा और फिर नीचे को लुढ़कने लगा। यान को नियन्त्रित करके उन्होंने फिर जमीन पर उतार लिया।

कम्प्यूटरों से सूचना प्राप्त हुई कि यान का भार अधिक है, इसलिए ऊपर उठ पाने में असमर्थ है···तो फिर यान की कौन-सी चीज फेंक दी जाय जो १५० के. जी. हो? तो क्या तीनों अन्तरिक्ष यात्री यहीं उतार दिये जायें?

थ्री पी. ने अपने साथियों के सामने यह समस्या रखी। वे तीनों सहमत हो गये, लेकिन थ्री पी. ने, जो इस यान का मुख्य चालक था, सुझाव दिया कि उसने अपनी जिन्दगी में सुदूर अन्तरिक्ष की अनेक यात्राएं की हैं, और वह खुद इस वीरान ग्रह में रहकर अपना जीवन समाप्त कर देना चाहता है। शेष तीन में से थ्री पी. ने टू पी. को भी अपने साथ रोक लिया।

वन पी. और जीरो पी. यान में रह गये और पी. थ्री और पी. टू बाहर निकल आये। उन्हें उस सुरंग के भीतर बसे एक अन्तर्मुखी नगर को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

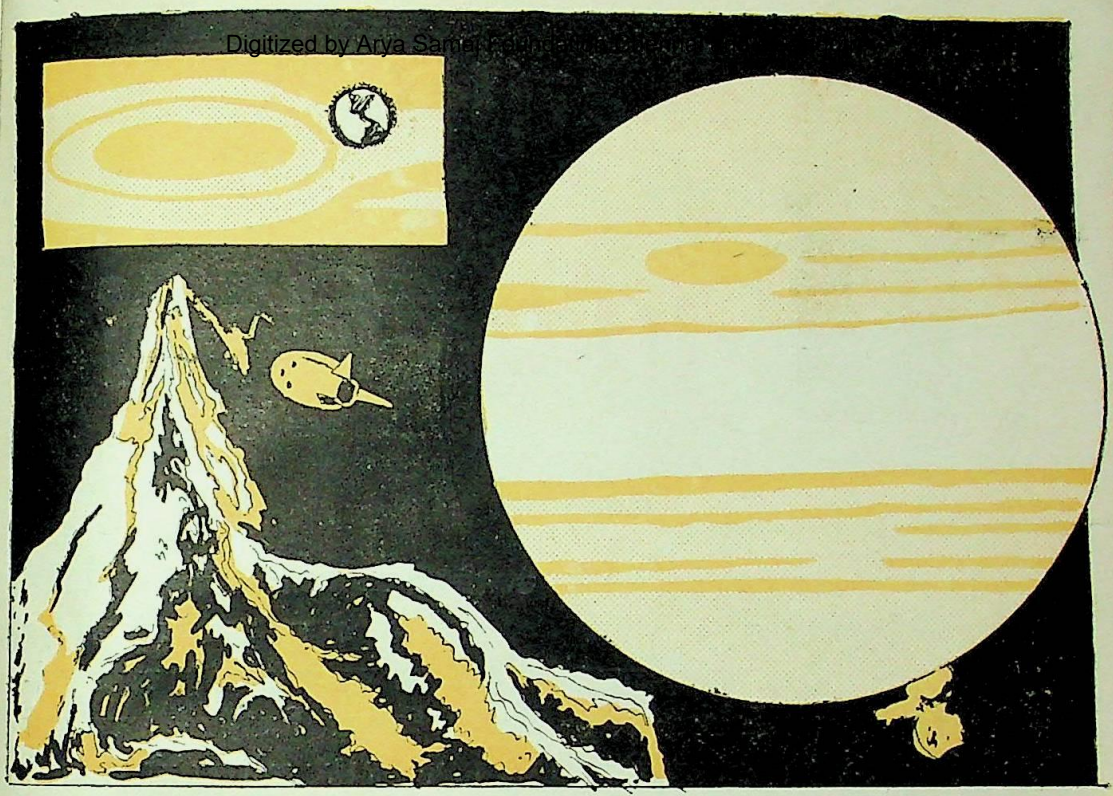

शायद ये ही वे पट्टियां हों। उन्हें रंगीन पट्टियों के काले ग्रह पर ही तो उतरना है

खोज निकालने की कल्पना सिहरा रही थी।

यान का दरवाजा बन्द हो गया। इंजिन फायर हुआ और यान ऊपर उठता चला गया। फिर वह ग्रह की परिक्रमा करने लगा। थ्री पी. और टू पी. ने ऊपर यान की ओर देखना चाहा, लेकिन घने बादलों के उस पार परिक्रमा करता हुआ यान दिखायी नहीं पड़ा।

अब यान का मुख्य चालक वन पी. था। जीरो पी. हाइबरनेटेड हो गया। वन पी. ईंधन और यात्रा का कोण चैक करने में लगा हुआ था।

सहसा वन पी. ने नीचे देखा, लेकिन उसे बादलों के पार सिर्फ रंगीन पट्टियां ही दिखायी दीं। उसने अलविदा कहा। कम्प्यूटरों ने एण्टी-सिलिकान राकेट फायर किये···अकल्पनीय वेग से यान चल पड़ा।

यह गैस का गोला···उसके नीचे रंगीन पट्टियां। गैस का गोला स्थिर है···रंगीन पट्टियां घूमती हैं···यही बृहस्पति है—अलविदा। पृथ्वी नहीं दीखी। यह बृहस्पति ही दीखा—एक निरर्थक यात्रा का जरा-सा पड़ाव। अब वन पी. भी हाइबरनेटेड होने वाला था, तभी उसने देखा, वह चमकता हुआ ग्रह··· नीली-नीली पट्टियां···उस ग्रह से बिलकुल भिन्न जिसे वह पीछे छोड़ आया था—अपने साथियों के साथ···यहां अब क्या रखा है···यही पृथ्वी है। क्यों न इस पर उतरा जाय···लेकिन यहां क्या रखा है···ओबेरान पुकारता है···यह अपरिचित सौरमण्डल यह अपरिचित सूर्य···ये अपरिचित पिण्ड, ग्रह-उपग्रह, ये पीछे छूट जायें। मेरा ग्रह, मेरे लोग। मुझे उधर ही जाना चाहिए···और वन पी. भी हाइबरनेटेड हो गया।

यान सात वर्ष के बाद ओबेरान पर उतरेगा। तब वह होगा और जीरो पी.। उन दोनों का ही स्वागत किया जायेगा। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

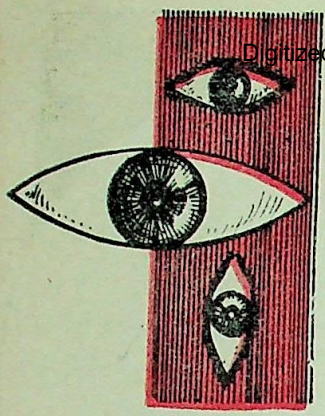

नेत्रदान की नवोपलब्धियां

मनोहर जोशी

शरीर का कौनसा अंग कब बेकार हो जायगा, कोई नहीं कह पाता। निष्क्रिय अंगों को घिसे-पुराने पुर्जों की भांति हटाकर नये अंगों द्वारा उनकी स्थानपूर्ति करना शरीर को नया जीवन देना है। जहां हृदयरोपण नया जीवन देता है, वहां नेत्ररोपण नये जीवन को नये उत्साह से जीने का उल्लास देता है। नेत्रों की ज्योति के बिना जीवन में अंधेरा ही अंधेरा है। अतः बुझे हुए नेत्रों को ज्योतिदान देने वाला नेत्रदान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

एक लाख से अधिक व्यक्तियों ने नेत्रदान किया

नेत्रों के इस यज्ञ कार्य में चिकित्सा-विज्ञान, वह भी अंगरोपण विज्ञान का बड़ा योग है। आज का नेत्र-चिकित्सक भी इस दिशा में बहुत कुछ करने के लिए कटिबद्ध है। अधिक समय नहीं हुआ, जब १९४४ में सबसे पहली नेत्र-बैंक अमेरिका में स्थापित की गयी। इसी के द्वारा मानव-सेवा करने की उच्च भावना से प्रेरित होकर अकेले अमेरिका में ही एक लाख से अधिक व्यक्तियों ने अन्त समय पर अपने नेत्रों का दान करके लगभग अस्सी हजार नयनविहीनों की अंधेरी जीवन-गलियों को जगमगाया है।

उपलब्धियां : एक आरम्भ मात्र

इतने पर भी इन उपलब्धियों को एक आरम्भ मात्र कहा जा सकता है। इसका कार्य-क्षेत्र भी अत्यन्त विशाल है। इस कार्य को वेग देने के लिए अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन में एक चार-दिवसीय संगोष्ठी भी आयोजित की जा चुकी है जिसमें संसार के बड़े-बड़े देशों से आये हुए लब्धप्रतिष्ठ नेत्र-विशेषज्ञों तथा चिकित्सकों ने भाग लिया। उसी प्रसंग पर इन्टरनेशनल आइबैंक का कार्यक्षेत्र बढ़ाकर बड़ी-बड़ी योजनाओं को अन्तिम रूप दिया गया। तीन वर्षों के अल्प समय में केवल एक ही बैंक द्वारा ९२८ नेत्रों के स्वच्छमंडल और २५६ समूचे नेत्र संसार के विभिन्न देशों को दिये गये। फिर तो देश-देश में नेत्र बैंक खोलने की परम्परा अपनायी गयी। ऐसे देशों में भारत भी महत्वपूर्ण स्थान पर है। अभी भी अनेक पिछड़े देश-प्रदेश ऐसे हैं जो तात्कालिक मृत व्यक्ति की स्वस्थ आंखें नेत्रदान हेतु निकलवाने के पक्ष में नहीं हैं, अन्यथा अकेले रोहे जैसे अत्यधिक प्रचलित नेत्ररोग से वर्ष में कम से कम पचास करोड़ व्यक्तियों को मुक्ति दिलायी जा सकती है।

स्वच्छमंडल के पुनरोपण में यद्यपि तत्काल प्राप्त मंडल को ही प्राथमिकता दी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाती है, तथापि संरक्षित मंडल को भी अधिक से अधिक मात्रा में रखे जाने का प्रयत्न किया जाता है। नयी आविष्कृत विधि के अनुसार –७९° सें के शीतांश पर १०,२० और ३० दिनों तक भी स्वच्छमंडल को संरक्षित रखा जा सकता है। इससे पूर्व, संरक्षण-विधि के अभाव में स्वच्छ मंडल लगभग ४८ घंटे ही ठीक अवस्था में रह पाता था। यदि किसी दुर्घटनावश पूरा ही स्वच्छमंडल क्षतिग्रस्त हो गया हो तब तो तत्काल प्राप्त मंडल की आवश्यकता पड़ती है, अन्यथा आंशिक क्षति में कुछ दिनों का संरक्षित मंडल भी काम दे जाता है।

इतिहास की दृष्टि से स्वच्छमंडल का रोपण कोई सर्वथा नया विज्ञान नहीं है। लगभग दो सौ वर्ष पूर्व ई. डारविन नामक एक ब्रिटिश वैज्ञानिक द्वारा इसका संकेत दिया जा चुका था। इसे प्रायोगिक रूप देने का श्रेय जर्मन डा. आर्थर हिपेल को है जिन्होंने १८८७ में पहला रोपण एक खरगोश की आंख लेकर और दूसरा रोपण मानव नेत्र द्वारा सफलतापूर्वक किया था। इस कार्य में सबसे बड़ी बाधा स्वच्छमंडल प्राप्ति की है। हमारे शरीर का यही एकमात्र पारदर्शक अंग है, मानो शरीर की खिड़की है, जिसमें से पूरा-पूरा प्रकाश नेत्र के अन्दर प्रवेश करता है। यही अंग अपेक्षाकृत सरलतापूर्वक रोपित भी किया जा सकता है। स्वच्छमंडल रोगमुक्त होने की अवस्था में प्रौढ़-वयस्क व्यक्तियों का प्राप्त होना अधिक उपयुक्त रहता है।

जन्तुओं के स्वच्छ मंडल को स्वीकृति नहीं

इन्टरनेशनल आइ बैंक के निदेशक डा. ज. विग जूनियर का कथन है कि जैविक स्वच्छमंडल की प्राप्ति हेतु इनके अभाव को देखते हुए जो थोड़े प्रयोग मिथाइलएक्राइलेट अथवा सिलिकन के बने प्लास्टिक के स्वच्छमंडलों के रोपण पर किये गये हैं, उनके परिणाम उत्साहवर्द्धक हैं। मानव-शरीर प्रायः जन्तुओं के स्वच्छ मंडल अधिक स्वीकृत नहीं कर पाता। कोलम्बिया विश्वविद्यालय के चिकित्सा और नेत्र-चिकित्सा विद्यालय के लिए इसी स्वच्छमंडल रोपण के कार्य को विस्तृत करने हेतु वहां के जन-स्वास्थ्य विभाग ने डेढ़ करोड़ डालर से भी अधिक राशि स्वीकृत की है।

हमारा देश भी इस कार्य में प्रगति कर रहा है। आल इंडिया इन्स्टीट्यूट आफ

स्वच्छमंडल के पुनरोपण में यद्यपि तत्काल प्राप्त मंडल को ही प्राथमिकता दी जाती है, तथापि संरक्षित मंडल भी अधिकाधिक मात्रा में रखे जाते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

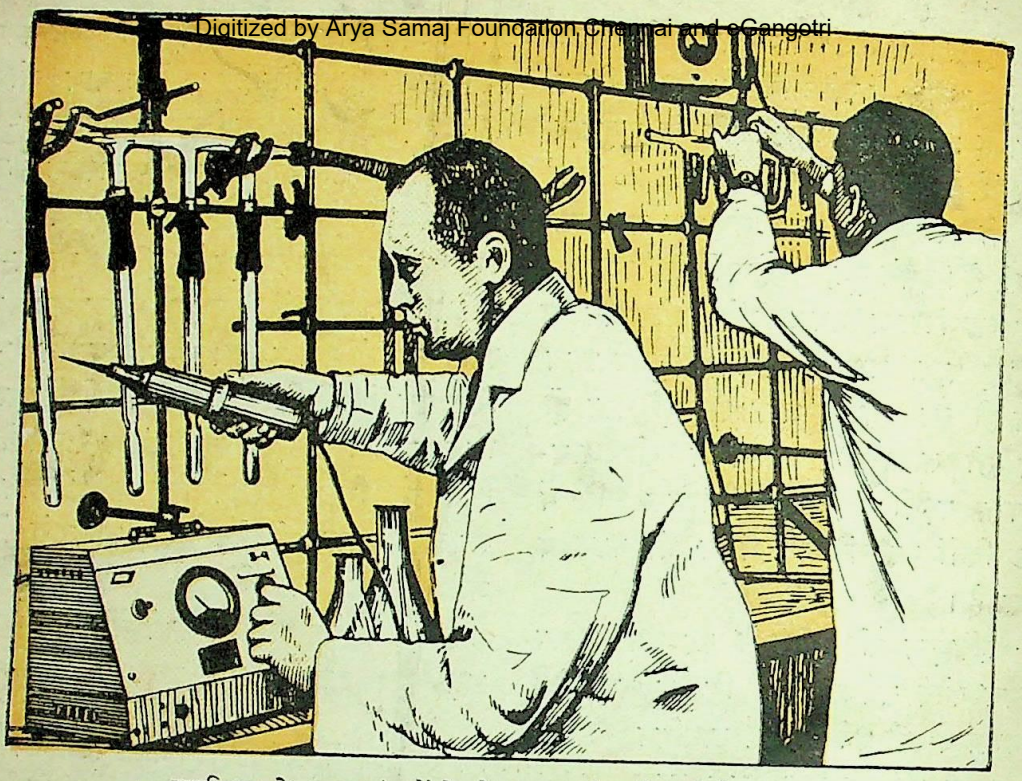

प्लास्टिक के स्वच्छमंडलों के रोपण पर जो प्रयोग किये गये हैं, उनके परिणाम उत्साहवर्द्धक हैं

मेडिकल साइन्सेज, नयी दिल्ली के राजेन्द्र-प्रसाद चिकित्सा केन्द्र में कार्यरत डा. मदन-मोहन अपने सहयोगी डा. आर. के. जैन के साथ इसी दिशा में नये प्रयोग कर रहे हैं। इनके कथनानुसार आरम्भ में खरगोश तत्पश्चात् वानर और फिर मानव पर प्लास्टिक के स्वच्छमंडल का रोपण करके देखना चाहिए कि वे कहां तक सफल और स्थायी रहते हैं।

जहां तक मनुष्यों द्वारा स्वच्छ मंडल के उपयोग हेतु नेत्रदान का प्रश्न है, भारत के अनेक अकालमृत्यु-प्राप्त अल्पवयस्क, अस्पतालों के कार्यकर्ता और कहीं-कहीं छात्र-वृन्द भी इस दानकार्य में आगे आने लगे हैं। व्यापारी वर्ग अभी इस ओर उदासीन ही है। यद्यपि अस्पतालों में नित्य ही सैकड़ों की संख्या में स्वस्थ नेत्र वाले व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त होते हैं, तथापि राज्य-विधान इस बात की आज्ञा नहीं देता कि ४८ घंटों तक शव के दावेदारों की प्रतीक्षा किये बगैर ही कोई अंग-विच्छेद किया जाय। नेत्र और उसके विभिन्न भागों के लिए यह अवधि एक लाल झंडी ही है, क्योंकि ४८ घंटे के बाद वे किसी उपयोग के नहीं रहते।

फिर भी नेत्र-दान और नेत्र-चिकित्सा का भविष्य उज्जवल है, इसमें सन्देह नहीं।

संसार की सबसे लम्बी स्त्री

संसार की सबसे लम्बी स्त्री बर्लिन पश्चिमी जरमनीकी मारीना वेंग है जिसकी लम्बाई २५५ सेमी (८ फुट ४ इंच) है।

०४०५५

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा ऑफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

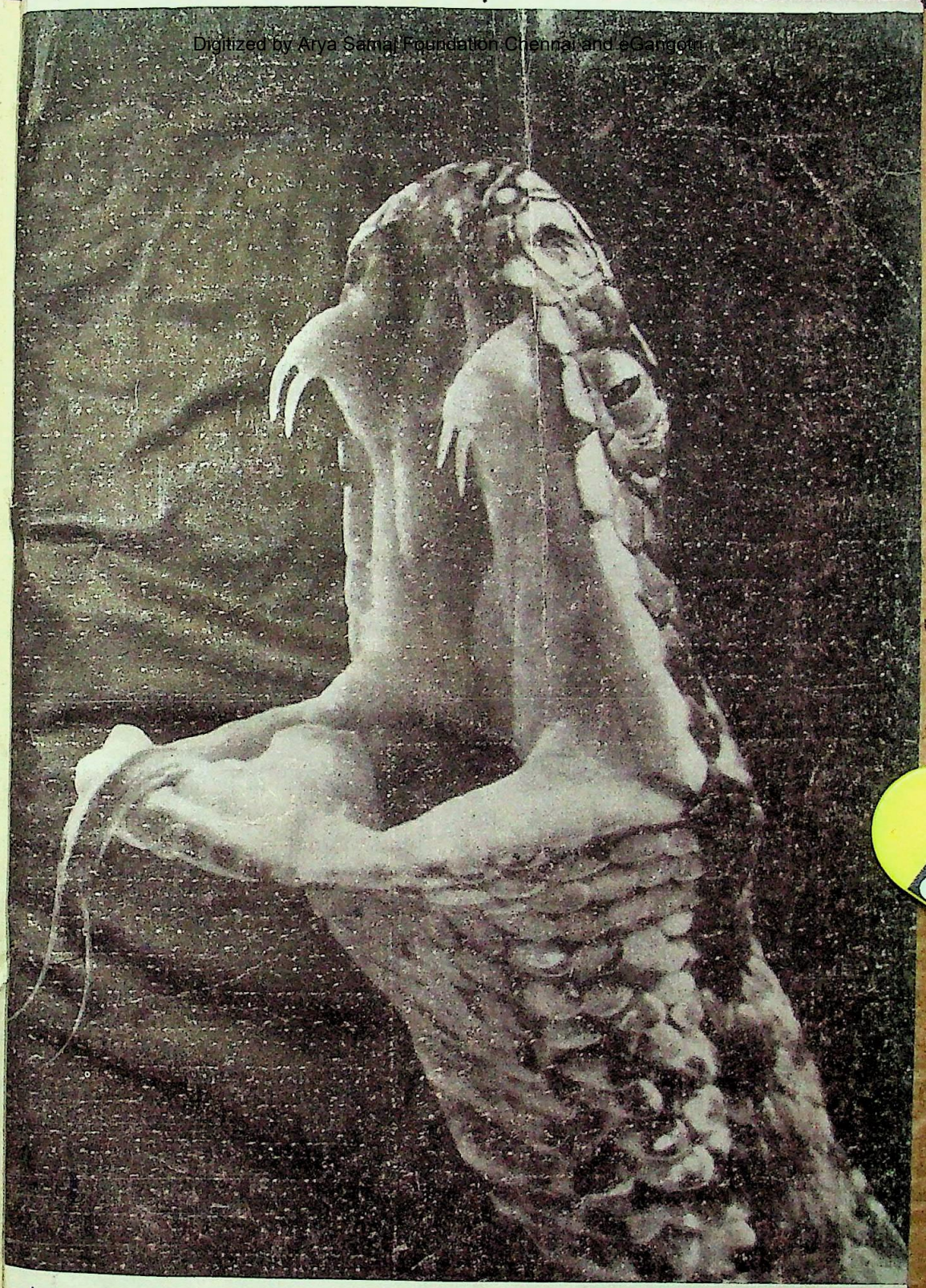

न यह किसी सुरंग का प्रवेश द्वार है, न किसी खोखली नली का ऊपरी सिरा···यह है 'वाइपर' नामक जहरीले सर्प का मुंह। जैसे ही झपटकर यह अपने दांतों (ऊपर) को चुभाता है, आदमी बेहोशी के गर्त में गिरने लगता है। इतना जहरीला है यह !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Registered with the Registrar of Newspapers for India under No. 6589/60
Price : Re. 1 VIGYAN-LOK, January 1972 Regd, No. L 1410
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फरवरी अंक के विशेष आकर्षण

विज्ञान-लोक

मानव-हित में विज्ञान

यह विज्ञान का युग है। वैज्ञानिक उपलब्धियों ने मानव-जीवन को प्रत्येक दिशा में प्रभावित किया है और सुख-सुविधा के अनेक साधन एकत्र किये हैं···लेकिन कहीं ऐसा तो नहीं कि विज्ञान द्वारा प्रदत्त अद्वितीय शक्ति मानव जाति को किसी विनाशकारी युद्ध में झोंक दे ?

असफल विश्वामित्र

भारतीय नौ सेना के जहाज 'सागर पुत्र' के कप्तान रवीन्द्रमोहन को प्रशान्त महासागर में एक विचित्र बोतल मिली थी। लेकिन उस बोतल को खोलने में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा···और जब बोतल खुली तो फिर रहस्य की परतें खुलती चली गयीं।

गला

क्या यह सिर्फ एक रास्ता है जिसके जरिये हम खाना खा सकते हैं ? या यह एक चौराहा मात्र है जहां से नाक, श्वांस, उदर की नलियां गुजरती हैं ? आखिर गला क्या है ?

प्रतिमलेरियाई ओषधि

मलेरिया ! एक साधारण-सा रोग, फिर भी एक घातक महामारी। आखिर इस पर नियन्त्रण कैसे किया गया ? वे ओषधियां कौनसी हैं जो इसका प्रतिरोध करती हैं ?

आलू विनाशक कीट

आप आलू उगाते हैं, खाते हैं लेकिन क्या आलू के दुश्मन से परिचित हैं ? शायद इसे आप देखते हैं पर पहचानते नहीं।

चित्रमय लेख साथ में सभी स्थायी स्तम्भ प्रत्येक पृष्ठ रंगीन
साज-सज्जा युक्त आकर्षक बहुरंगी मुखपृष्ठ

(20 जनवरी तक प्रकाश्य)

एक प्रति Re. 1·00 : वार्षिक Rs. 12·00

अपनी प्रति आज ही अपने न्यूजएजेण्ट से सुरक्षित करा लीजिए या हमें लिखिए

मेहरा न्यूजपेपर्स, हास्पिटल रोड, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

A.H.W.